प्राकृतिक चिकित्सा के चमत्कार

धर्मचन्द सरावगी

प्राकृतिक चिकित्सा
का
चमत्कार

लेखक
श्री धर्मचन्द्र सरावगी
संस्थापक महामन्त्री
अखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद

भूमिका लेखक एवं सम्पादक
हीरालाल महामंत्री
अखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद
१५, राजघाट कालोनी, नई दिल्ली

प्रकाशक :
प्रेमचन्द बी.एस.सी. एन. डी.
जनस्वास्थ्य प्रकाशन
प्राकृतिक चिकित्सालय
मगरवारा, उन्नाव (उ. प्र.)

प्रकाशन काल :
नवम्बर ८६

आवरण शिल्पी :
शिल्प निकेतन
पटकापुर, कानपुर

मूल्य : दस रुपये

लेखक के दो शब्द

हम छोटी-सी मशीन खरीदते हैं, उसे सावधानीसे रखते हैं और उसकी हिफाजत करते हैं। लेकिन हमारे पास एक ऐसी मशीन है जो बेश कीमती है, सुन्दर है। पर इस मशीन जो प्रकृति कहिए या भगवान कहिए द्वारा दी गई है, को हम बेहद असावधानीसे काममें लाते हैं। न इसकी सफाईका ठीक प्रबन्ध करते हैं, न इसके विश्रामकी उचित व्यवस्था और न सुरक्षाकी चिन्ता करते हैं। रात-दिन इस पर चिन्ताओंका बोझ लादे नासमझ चालक की तरह चलाते हैं।

हम असावधानीमें बहुत-सी छोटी-छोटी गलतियाँ करते रहते हैं। उनका पता भी हमको नहीं लगता। गलतियोंका पता न लगने के दो कारण होते हैं। एक तो हमें कभी उनका लेखा-जोखा नहीं मिलता। दूसरे प्रकृति हमारी भूलोंको माफ करती रहती है।

मेरे जीवनके ४६ वर्षोंमें प्राकृतिक चिकित्साके जो चमत्कार देखे उसका निचोड़ इस पुस्तकमें है। जन स्वास्थ्य प्रकाशनने यह पुस्तक प्रकाशित कर एक बहुत बड़ी सेवाका कार्य किया है। पाठक इससे लाभ उठावें तो मुझे बहुत आत्म-संतोष और प्रसन्नता होगी।

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक "प्राकृतिक चिकित्सा का चमत्कार" प्राकृतिक चिकित्सा के लिए प्रेरणा श्रोत है।

पुस्तक के लेखक श्री धर्मचन्द जी सरावगीका जीवन प्राकृतिक चिकित्साके अनुभवसे भरा पड़ा है और अपने धुन एवं इरादे के पक्के हैं। उन्हें जो धुन लग जाती है उसके पीछे पागल कहिए या दीवाना कहिये, होकर पड़ जाते हैं।

पुस्तक उनके अनुभवपूर्ण लेखोंका अनुपम संग्रह है। यों तो प्राकृतिक चिकित्सा पर अनेक पुस्तकोंका प्रकाशन हुआ है और उसमें सिद्धांत एवं व्यवहार विस्तारसे बताया गया है पर प्रेरणाका सदा अभाव खटकता रहा।

प्रस्तुत पुस्तकसे प्रेरणा प्राप्त कर व्यक्ति रोगसे बच, रोग मुक्त एवं अधिक स्वस्थ होकर समाज की सेवा कर सकता है।

प्राकृतिक चिकित्साका चमत्कार पुस्तक वास्तवमें यथा नाम तथा गुण हैं। कहावत है चमत्कारके बाद ही नमस्कार होता है अतः पाठक इस पुस्तकको पढ़ एवं उसे जीवनमें उतार कर जब अपनेमें भी चमत्कार का दर्शन करेगा तो वह माँ प्रकृतिके चरणोंमें अपनेको निछावर किये बिना रह ही नहीं सकता। इस पुस्तकके लिए धर्मचन्द जी सरावगी को बधाई दिये बिना कोई भी व्यक्ति, जो इसे एक बार पढ़ेगा, रह ही नहीं सकता। मैं उनका हार्दिक अभिनन्दन करते एवं बधाई देते हुए ईश्वरसे प्रार्थना करता हूं कि वेदोक्तिके अनुसार उन्हें 'जीवेम शरदः शतम्' से विभूषित कर समाजकी सेवा करनेका अवसर प्रदान कर मेरी प्रार्थनाको स्वीकार करें।

डा० हीरालाल

विषय-सूची

प्राकृतिक चिकित्सा का चमत्कार

मिट्टी, तेरे यह ठाठ !

बहुत पुरानी बात है। उन दिनों हमारे यहाँ दवाइयोंका दौर-दौरा था। मेरे एक परिचित व्यक्तिके शरीरपर मकड़ीने मूत दिया। हम उन्हें अपने परिवारिक डाक्टरके पास ले गये। डाक्टर हमारी बात सुनकर हंसने लगे और बोले, लोगोंमें कितनी गलतफहमी है। मकड़ी को क्या मूतनेके लिए कोई और स्थान नहीं मिला जो उसी स्थानपर मूतने आयी। यह तो चर्मरोग है, मैं दवाई देता हूँ, ठीक हो जायेगा। लोग बिना समझे-बूझे रोगका चाहे जो नाम रख देते हैं और दूसरे लोग उसे मान भी लेते हैं। खैर, उनकी दवाई लाई गई और कई दिनों बाद मकड़ीके मूतका असर दूर हुआ।
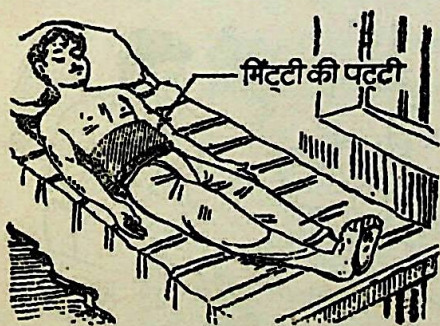
आजकल हमारे यहाँ मिट्टीका बोलबाला है। मेरे दोहते 'संजीव' के मुंह और हाथ पर छोटी-छोटी पानी भरी फुंसियां हो गयीं थीं। पहले वाली बात होती तो मलहम और इन्जेक्शन आरम्भ हो गये होते, पर अब तो इसके लिए हमारे यहाँ ठंडी-ठंडी मिट्टीकी पट्टियाँ ही लगाई जाती हैं। संजीवकी फुन्सियों एवं पेड़ूपर भी आध-आध घंटेके लिए वही मिट्टीकी

पट्टी दिनमें दो-तीन बार लगायी गयी। जिससे वहां की फुन्सियां तो दूर हो गयीं पर दूसरी जगह वे फिर निकल आयीं अतः उसे नीमके पानीका एनीमा दिया गया और फलों पर रखा गया। दो-एक दिनोंमें ही सारी फुन्सियां गायब हो गयीं। लोगोंको फुन्सियों पर मिट्टीकी पट्टी देनेसे उसमें सैप्टिक हो जानेका डर रहता है। ऐसे लोगोंको मालूम होना चाहिये कि जो कुछ भी हम खाते हैं या हमारा शरीर जिस चीजसे बना है वह सब मिट्टी ही तो है। यह सावधानी अवश्य रखनी चाहिये कि जो मिट्टी काममें लें वह साफ सुथरी हो।

कुछ वर्षों पहले की बात है। माताजीके दांतोंमें दर्द उठा। गरम-ठंडे कुल्ले किये गये, सेंक किया, पर दर्द जा नहीं रहा था। दवाईके पक्षमें तो वे थीं नहीं। आखिर एक प्राकृतिक चिकित्सकको बुलाया गया। मिट्टीसे दांतोंको मलनेके लिये कहा। पहले तो वह राजी नहीं हुई, पर जब डाक्टरने जोर दिया और समझाया कि आप करके देखें, क्या नुकसान है? यह उपचार कई रोगियों पर आजमाया हुआ है, जादू का सा काम करता है। तब वह राजी हुई
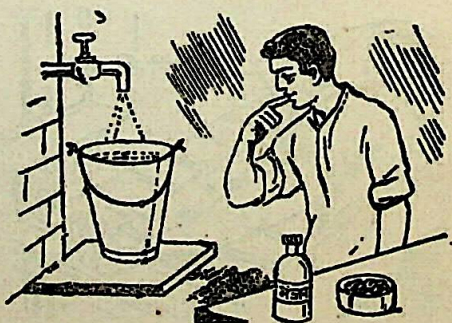
मिट्टी से दांत मलते हुए

और मिट्टी का मंजन किया गया। पहले तो दर्दके स्थान पर थोड़ा और दर्द हुआ जो स्वाभाविक था। पर उन्होंने उसकी

परवाह न कर मंजन करना जारी रखा और दांतका दर्द एक वारके मंजन करनेसे ही कम हो गया। फिर तो उन्हें उसपर थोड़ा विश्वास हुआ और पहले ही दिनमें तीन वार मिट्टीका मंजन किया, जिससे दर्द आधा रह गया। उसके वाद लगातार दो-तीन दिनों तक उसी प्रकार दिनमें तीन वार मिट्टी का मंजन करनेसे दर्द बिल्कुल दूर हो गया। अब जब कभी इसका जिक्र हम अपने परिवारमें करते हैं तो आश्चर्य होता है।

आजकल कई प्राकृतिक चिकित्सक मिट्टीके छोटी छोटी टिकिया बनाकर रखते है जिसे मिट्टीके पेड़े कहते है और दातून और टूथ पेस्टकी जगह सुबह इन्हें मुँहमें रखकर मंजन करने की सलाह देते हैं।

फ्लू दरवाजे तक आकर लौट गया

स्वस्थ जीवनके दफ्तरमें वर्मा जी कई वर्षोंसे काम करते थे और प्राकृतिक चिकित्साके नुस्खे और चुटकुले बराबर सुना करते थे। कुछ दिन बाद उनके मनमें दवाइयोंकी गुलामीसे निकलनेके लिए पुराने संस्कारोंकी जंजीरको तोड़नेका विचार आया। होनहार कहिये, या संयोग की बात, उन्हीं दिनों शहर में चारों ओर जोरोंसे फ्लू फैला और कोई घर ऐसा न बचा कि जिसमें दो-एक फ्लूके मरीज न हों।

एक शुक्रवारको वर्माजी दफ्तरसे घर गये तो तबियत सुस्त थी। भोजन करनेकी इच्छा नहीं हुई। पत्नीने उन्हें सुस्त देखकर उसका कारण पूछा। वर्माजी खुद नहीं जानते थे कि सुस्तीका कारण क्या था।

पत्नीने खाना खानेके लिए आग्रह किया। वर्माजी ने खाना मंगानेके पहले मनमें सोचा कि खाना खाऊँ या नहीं।

उस समय उन्हें स्वस्थ जीवनमें पढ़ी हुई वह सूक्ति याद आयी कि मनमें यदि विचार उठे कि खाना खायें या न खायें तो उस समय नही खाना ही ठीक है। अतः उन्होंने तुरन्त निश्चय करके दृढ़तापूर्वक पत्नीसे खाना न खानेके लिए कहा।
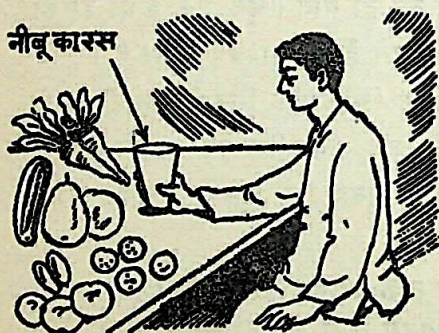
उस रात वर्माजी ने विना नमक या चीनी मिला हुआ केवल नीबूका पानी पीया। दूसरे दिन पहले से तवीयत कुछ ठीक थी, पर बिलकुल साफ नहीं हुई थी। वे काम पर गये पर दिन भर कुछ नहीं खाया। केवल नींबूका पानी ही लेते रहे। पत्नीके घबड़ानेपर उन्होंने उसे समझाया कि शहरमें फ्लू फैला है, यदि खान–पानमें मै जरा भी गड़बड़ी करूंगा तो कम से कम एक सप्ताह तक बीमारी भुगतनी पड़ेगी।

यदि हम किसी मेहमानको अपने यहाँ बराबर बुलाना न चाहें तो उसकी आवभगत और खातिरदारी नही करनी चाहिए। उसी तरह जब बुखार आता हुआ दिखाई दे तो उसे उपवास रूपी लाल झंडी दिखानी चाहिए, जिससे वह उस व्यक्तिको कंजूस और खतरनाक समझ कर उसके पास नहीं फटकेगा।

इस डेढ़ दिनके उपवाससे हो सकता है वर्माजी के शरीर में थोड़ी कमजोरी आई हो, पर आर्थिक नुकसान न होनेसे उनका पाकेट कमजोर नहीं हुआ। पर यदि फ्लूका आक्रमण

उन पर हो जाता तो एक सप्ताह तो अवश्य ही घर पर बैठा देता और तब आर्थिक नुकसान भी होता ही। साथ ही दवा का खर्च लगता सो अलग, और सगसे वुरी बात तो यह होती कि फ्लूकी वजहसे शरीर अधिक निर्वल हो जाता।

रविवारको वर्माजी ने आराम किया। सोमवारको जब काम पर गये तो हंसते हुये बोले, इस बार मेरे दरवाजे तक फ्लू आकर लौट गया।"

शरीरकी सफाई

मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटीकी बात है। मैं कई वर्षोंसे वहाँ हर मंगलवार, वृहस्पतिवार तथा शनिवारको सुबह प्राकृतिक चिकित्सा विभाग देखने जाता हूँ। जहाँ रोगियोंसे उनकी सुविधा-अविसुधाके सम्बन्धमें चर्चा करता हूँ।

एक दिन राजस्थानसे आये ४५ वर्षीय एक व्यक्तिसे बात कर रहा था तो उनके एकजिमा रोग और उनकी चिकित्साकी चर्चा चल पड़ी। उन्होंने बताया—पहले उन्होंने अपने रोगकी एलोपैथी, आयुर्वेदिक तथा यूनानी चिकित्साएँ करायी जिनसे जो भी लाभ हुआ, वह क्षणिक ही हुआ। कई वर्षो तक कष्ट सहनेके बाद एक मित्रके कहनेसे प्राकृतिक चिकित्सा कराने कलकत्ता आये हैं। प्राकृतिक चिकित्सासे जिस ढंगसे लाभ हो रहा है उसे देखकर ऐसा लगता है कि यदि वह पहले गलत रास्ते पर न चले होते तो न तो उनका इतना धन ही खर्च होता और न समय ही नष्ट होता।
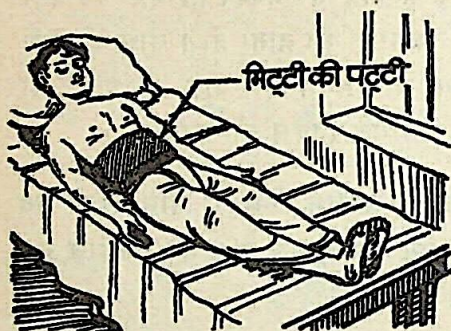
मैंने उनसे पूछा, आप यहाँ एक-डेढ़ महीनेसे चिकित्सा करा रहे हैं, उससे जिस मंद गतिसे सुधार हो रहा है क्या उससे आप संतुष्ट हैं ? कभी घबड़ाते तो नहीं ? क्योंकि औषधियोंसे तो आनन-फाननमें रोग दब जाते हैं।

उन्होंने हँसते हुए कहा "मैं घबराता बिलकुल नहीं हूँ। मैं तो जानता हूँ कि मेरे शरीरकी सफाई हो रही है। औषधियोंके रूपमें खाया हुआ विष पहले निकलेगा। उसके बाद कहीं शरीरका पुर्ननिर्माण होगा। इस सम्बन्धमें मैं एक उदाहरण आपको देता हूँ। जिस प्रकार यदि कोई चाहे कि किसी कूड़ाखानाके स्थानपर रहनेके लिए मकान बने तो सबसे पहले उसे उस स्थानके कूड़ेको साफ करना होगा उसके बाद मकान बनाना होगा। उसी प्रकार सोसाइटीमें अब तक मेरे शरीर की सफाई होती रही और अब उसके पुर्ननिर्माणका कार्य आरम्भ होगा।"

वह बन्धु लगभग तीन महीने कलकत्ता रहकर गये और इतने ही दिनोंमें उनका एक्जिमा (अकौता) दूर हो गया। भोजन सुधारके साथ पेड़ू और एकजिमापर नित्य मिट्टीकी पट्टी लगाई जाती थी।

एंड़ीसे चोटी तकका इलाज

सोसायटीमें एक रोगी भर्ती हुआ जिसे यदि भोजन-भट्ट

कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। यह एक अकाट्य नियम है कि भोजन भट्टोंको सारे रोग होने सम्भव है। मैं जब कभी उस रोगीको भोजनपर नियंत्रण करनेकी बात कहता, तो वह कहता क्या करूं, मैं तो खानेकी इच्छा कम रखता हूँ, परन्तु जब कहीं जाता हूँ तो सभी लोग मुझसे खानेके लिए आग्रह करते हैं। यहाँ तक कि लखपति लोग भी खाओ महाराज, खाओ महाराजकी रट लगाते रहते हैं। सामने जब मिष्ठान आता है तो मैं अपनी रसनापर काबू नहीं रख पाता, खाना ही पड़ता है। मालूम होता है मेरी जन्म-पत्रिमें ऐसा ही ग्रह पड़ा है। जब मिष्ठानका स्वाद लेता हूँ तो रोगोंका दुःख दूसरा कौन भोगेगा? खैर, अब तो आपके पास आया हूँ। यहाँ संयम नियमसे रहना हीं होगा। यहाँ अपनी जिह्वापर नियंत्रण न रखूँगा तो क्या किवाड़ोंको खाउंगा? यहां तो अस्पताल वाले जो खिलायेंगे वही खाना पड़ेगा न?
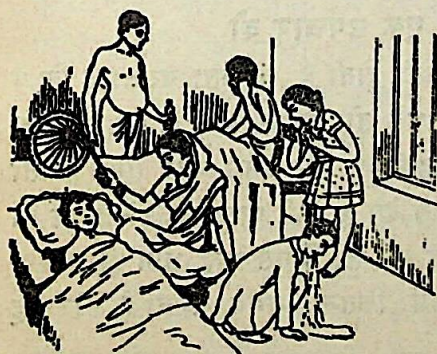
बीमार परिवारका भोजन

इस रोगीको प्रवेशित विभागमें चिकित्सा कराते लगभग १५ दिन ही हुये थे कि केन्द्रीय सरकारकी ओरसे एक संसद सदस्य अस्पतालका निरीक्षण करने आये। सोसायटी का अन्य विभागोंका निरीक्षण करनेके बाद जब वह प्राकृतिक चिकित्सा विभांगमें पहुँचे तो सामने यही महाशय खड़े मिले।

लगे यह प्राकृतिक चिकित्साकी प्रशंसा करने—"यह इलाज तो ऐसा है कि इसमें दवा इंजेक्शन कुछ नहीं दिया जाता और एंडीसे चोटीतकका इलाज होता है। मेरे पैरोंमें जलन थी, टेहुनेमें जलन और दर्द था, कमरमें पीड़ा थी, लिवर खराब था, दांत हिलते थे यहां तक कि चोटी तक ब्रह्माण्ड दिन भर सन्न सन्न करता था। इन सबका इलाज करा रहा हूँ। बड़ा फायदा है।" जब यह संसद सदस्यसे बात कर रहे थे तो साथ साथ अपने अंग प्रत्यंगोंकी ओर इशारा भी करते जाते थे।

उनके कहने और बतानेके ढंगको देखकर वहाँपर उपस्थित सभी लोगोंको देखकर हँसी आ रहीं थी। एक मित्रसे न रहा गया। वह मुझे अलग से जाकर बोले "आपने इसे सिखा-पढ़ा रखा होगा।" मैं क्या कहता हसकर रह गया। पर सच बात यह थी कि वह रोगी स्वयं ही अपने हृदयके उद्‌गारको लोगोंपर प्रकटकर रहा था।

रोग एक उपचार दो

लोगों से जब बातें होती हैं तो पता चलता है कि वे प्राकृतिक चिकित्सासे लाभके तो कायल होते हैं, पर यह कहकर कि यह चिकित्सा मँहगी है और इसमें बहुत समय लगता है, अपना एक रिमार्क कस देते हैं। मैं पाठकोंके विचारार्थ दो परिवारोंका चित्र नीचे दे रहा हूँ, जिनसे उन्हें भान हो जायगा कि प्राकृतिक चिकित्सामें कितना समय लगता है और वह कितनी महँगी है ?

कलकत्तेके एक धनी परिवारमें, जिसके यहाँ अपना मकाव, मोटर, कारखाने तथा सैकड़ों कर्मचारी काम करते हैं, परिवार की सबसे अधिक उम्र वाली लगभग ८२ वर्षकी एक बृद्ध

महिला ज्वरसे पीड़ित हुई। ज्वर आनेके दूसरे दिन अपना कार्य खुद करनेके अभ्यासके कारण जब वह शौचालय गई तब एकाएक बेहोश हो गयी। पास पड़ोसके तथा रिश्तेदार आदि भी घबड़ा गये। घर वाले प्राकृतिक चिकित्साके बड़े प्रेमी थे। उन लोगोंने उस वृद्ध महिलासे उपवास कराना प्रारम्भ कर दिया। दिन में तीन तीन बार ठन्डे पानी में कपड़ा भिगोकर और निचोड़कर उससे समूचा शरीर पोछा जाता, नींबूके पानी का एनीमा दिया जाता। जितनी बार शरीर पोछा जाता उतनी बार एक बाल्टी ठन्डे पानीसे उसका माथा भी धो दिया जाता, पर फिर भी ज्वर तीसरे और चौथे दिन भी नहीं उतरा। तब लोगोंने मलेरिया और टाइफाइड का हल्ला मचाना शुरू कर दिया। दूसरे दिन सम्पूर्ण शरीरकी गीली पट्टी दी जाती थी। प्राकृतिक चिकित्सक नित्य देखने जाते थे, उस रोज भी आये। लोगोंके सन्तोषके लिए रोगिणीके रक्त और मूत्रका टेस्ट उन्होंने कराया। पर खूनके टेस्टसे दोनोंमें से एक भी प्रकारका ज्वर साबित नहीं हुआ। ज्वर छठवें और सातवें दिन भी आया जो काफी तेज भी था। रोगिणी गर्मीके ज्वरके कारण चुपचाप लेटी रहती पर चूंकि प्राकृतिक चिकित्साके उपचारके कारण उसे काफी पानी पीने को दिया जाता, इसलिये उसे बेचैनी नहीं थी। आने जाने वाले

सम्पूर्ण शरीरकी गीली पट्टी

और रिश्तेदारोंने काना-फूसी आरम्भ कर दी कि बृद्धाको खाने के लिए कुछ नहीं दिया जाता। इस उम्र में उसका अन्न छूट गया। अब क्या बचेगी ? संयोगसे उसके पौत्रका विवाह कुछ ही महीनोंमें होने वाला था। लोग कहते "बेचारी यह विवाह देख लेती तो बड़ा अच्छा होता।" किन्तु घर वाले तो प्राकृतिक चिकित्साके पक्के अनुयायी थे। वे ज्वरके कारण घबराये नहीं। सोचा शरीरमें विकार है यदि वह दूर हो जाएगा तो भविष्यके लिए परम कल्याणकारी होगा। रोगिणी की नाड़ी और हृदयकी गतिकी परीक्षा होती रहती थी, साथ ही अधिकसे अधिक आरामकी दृष्टिसे परिचारिकाएँ रख दी गई थी और नित्यकर्मके लिए स्नानागारमें जानेके बदले उसकी व्यवस्था पलँगपर ही कर दी गयी थी, इस तरह फल एवं नींबूके रस और पानीपर उपवास और ज्वर दोनों सात-आठ बल्कि नव दिन चलते रहे जिनकी वजहसे न तो रोगिणीके चेहरेपर घबराहटके लक्षण थे और न घरवालोंके चेहरोंपर। सब जानते थे कि मरना-जीना तो परमात्मा, भाग्य अथवा आयु आदिके आधीन है पर चूँकि रोगिणीकी सेवा बढ़ियासे बढ़िया हो रही थी इसलिए सबको सन्तोष था। और यह समझकर कि रोग शरीरके विकारको निकाल रहा है और जिसे औषधि देकर रोक देनेमें खतरा है, वे बिल्कुल नहीं घबड़ाये।

दसवें दिन ज्वर चला गया। उसने सोचा होगा "बड़े कंजूस धनीसे पाला था। उसके साथ मैं दस दिन तक रहा पर उसने एक दिन भी न तो मुझे दूध पिलाया, न बार्ली दिया न मुनक्का। केवल मुझे नींबूके पानीपर रखता रहा। भला आदमी यदि उस नींबूके पानीमें थोड़ीसी चीनी ही मिला देता

तो मुझे शिकंजवीका थोड़ा मजा तो आ ही जाता और मैं कुछ दिन और टिक जाता।"

ज्वर छूटनेके दूसरे दिन, दिन भरमें तीन बार बृद्धाको आधी मुसम्मीके रसमें उतना ही पानी मिलाकर दिया गया। उसके वाद तीसरे दिन मुसम्मीकी संख्या तीन कर दी गयी सागका सूप भी दिया गया।

चौथे दिन किशमिशका पानी और थोड़ा धानका लावा दिया गया जिसे मारवाड़में खोई कहते हैं।

अब बृद्धाके स्वास्थ्यमें धीरे-धीरे सुधार होने लगा। ज्वर जाते ही बृद्धा बोलने व हंसने लगी और अपनी आलमारियोंकी चीजोंको संभालना प्रारम्भ कर दिया।

इसी परिवारसे मिलती-जुलती स्थितिके एक दूसरे परिवारमें भी एक महिला बीमार पड़ी। ज्वर चढ़ते ही उसका खाना वन्द कर दिया गया। दूसरे दिन जब ज्वर नहीं उतरा तब वैद्यजी बुलाये गये जिन्होंने कुछ गोलियाँ दीं और कोई काढ़ा पीनेको बताया और पथ्यमें दूध और बार्ली बताई। तीन चार दिनके इस उपवाससे भी जब उसका ज्वर नहीं उतरा तब घर वाले घबड़ाये और किसी डाक्टरको बुला लाये। डाक्टरने आते ही कई दवाइयाँ और इन्जेक्शन मँगवाये। इन्जेक्शन देकर तीन-तीन घंटेपर दवाइयाँ खानेको दी। परन्तु रोगपर उनका कोई असर नहीं हुआ। पाँचवें और छठे रोज भी ज़व ज्वर नहीं उतरा तब लोग टाइफाइडका सन्देह करने लगे। छठे दिन रोगिणीके पेटमें एकाएक दर्द आरम्भ हुआ, तब कोई दवा दी गई उस दर्दको बन्द करनेके लिए, पर उल्टे उसे दस्त आने लगे। फलतः उसे बड़ी कमजोरी मालूम होने

लगी। चिकित्सकने जब दस्त बन्द करनेकी दवा दी, जिससे दस्त आना तो तुरन्त बन्द हो गया, पर दूसरे क्षण रोगिणीका माथा घूमने लगा। फिर माथा घूमना बन्द करनेके लिए जब गोलियाँ दी गई तो रोगिणीकी बेचैनी बढ़ गई। इस तरह करते-करते महीनों गुजर गये।

एकके बाद एक चिकित्सक और दवा बदलती रही। खानेमें दूध, साबूदाना, बार्ली और अनार आदि चलते रहे ताकि रोगिणी कमजोर न हो जाए। परन्तु बृद्धा जो एक बार खाटपर सोई तो फिर उसने उठनेका नाम ही नहीं लिया। दो चार दिनोंके लिये यदि वह ठीक भी हो जाती तो उसके बाद ही किसी अन्य नई व्याधिसे ग्रस्त हो जाती। कभी सुइयों के स्थानपर दर्द होता तो, कभी माथेमें, और कभी पेटमें तथा कभी नसोंमें। अंतमें हारकर सब यही कहने लगे, दवाइयाँ करनेमें तो कुछ उठा नहीं रखा जाता है, क्या किया जाय, रोगिणीका भाग्य जाने, यह उम्र ही ऐसी है, बीमार होना स्वाभाविक है। इस उम्रमें भगवान इसे जल्दी उठा ले तो अच्छा ही है। बृद्धा जब इस किस्मकी बात लोगोंको करते सुनती और अपने कष्टपर विचार करती तो वह भी भगवान से यही प्रार्थना करती कि वह मरकर बेटे-पोतोंके कन्धेपर चली जाय तो बड़ा अच्छा। सम्पन्न परिवारमें होनेके नाते डाक्टर एवं परिचारिकाओंका तो खर्च होता ही था, साथ ही कीमती दवाइयाँ भी खरीदनी पड़ती थी। आखिर वह महिला पोते-पोतियोंके कन्धोंपर परमात्माके यहाँ पहुँच गयी।

विदेशोंमें प्राकृतिक चिकित्सा

विदेश-यात्राका यह मेरा पांचवा अवसर था। पृथ्वी

प्रदक्षिणाका दूसरा। पर, इस यात्रा में मेरी विशेष इच्छा थी कि प्राकृतिक चिकित्साके सम्बन्धमें विदेशोंमें जो कार्य हो रहा है, उसे देखना चाहिए।

मैं ४ जुलाईको कलकत्तासे रवाना हुआ और जर्मनी, फ्रांस, इंगलैंड, अमेरिका, जापान और हांगकांग होता हुआ लगभग ९ सप्ताह बाद १२ सितम्बरको कलकत्ता लौटा।

मौसमके ख्यालसे यात्रा बढ़ी सुखद रही। जहां-जहां गया, लोगोंने यही कहा कि हमारे यहां दो दिन पहले या तीन दिन पहले वर्षा बन्द हुई। पर अब मौसम अच्छा है। किसीने कहा कि दो तीन दिन पहले तक गर्मी बहुत थी, पर अब मौसम अच्छा है। विदेशियोंको तो क्या कहना, पर भारतीय मिलते तो हंसकर कह देते कि जहाँ धर्म पहुंचता है, वहां तो सब कुछ अच्छा होता ही है।

जर्मनी और इंगलैंडमें प्राकृतिक चिकित्साका काफी प्रचार है और वह दिनोदिन बढ़ रहा है। विशेष बात यह है कि एलोपैथीके लिए सरकारों द्वारा अरबों रुपये खर्च करके जगह–जगह अस्पताल आदि बनाये गये हैं और बीमार होने पर लोगोंको सुश्रूषाके अलावा दवाएं मुफ्त मिलती हैं। यहां तक कि आँख खराब होने पर चश्मा तक मुफ्त मिलता है। दांत खराब होने पर दाँत निकाल कर दांत मुफ्त लगा दिये जाते हैं। टांग खराब होने पर उसे काटकर मुफ्त बैसाखी दे दी जाती है। शरीरका कोई अंग खराब हो, सरकारी खर्चसे बदल दिया जाता है। उपरोक्त सुविधाओंके मुकाबलेमें वहांके प्राकृतिग चिकित्सालयोंमें ३० से ६१ रोज तक रोगीसे दैनिक चिकित्सा और भोजन आदिका शुल्क लिया जाता है। फिर

भी वहां प्राकृतिक चिकित्सालयोंकी संख्या दिनोदिन बढ़ती जा रही है।

उबाला पानी फेंककर विटामिन नष्ट करना

मैंने जब वहाँ कई रोगियोंसे बातेंकी तों उन लोगोंने यही बतायाँ कि हम वर्षों तक औषधियाँ खाकर जब अपना स्वास्थ्य सुधार नहीं सके तब यहां आये और बिना औषधिके अब हमें काफी लाभ हो रहा है। कुछ रोगी ऐसे भी मिले, जिन्होंने यहभी बताया कि हम अपने शरीर और आधुनिक जीवनमें गलतियां करते हैं, इसका प्रायश्चित करनेंके लिए दो-चार वर्षोंपर यहां आ जाते हैं। यहांसे स्वस्थ होकर जाने के बाद हमें गलतियां नहीं करनी चाहिए और अस्वस्थ नहीं होना चाहिए पर हममें जो कमजोरियां हैं, उसका दण्ड भोगना चाहिये और हम भोगते हैं।

मैंने जब भारतीय प्राकृतिक विद्यापीठकी चर्चाकी, तो सभी प्रसन्न थे और लोगोंने कहा कि जिस तरह सूरज पूरबसे उगता है, रोशनी भी पूरबसे आती है, संसारके महापुरुष भी पूरबसे आयें, उसी तरह प्राकृतिक चिकित्साका प्रकाश भी लोगोंको औषधियों के चंगुलसे छुड़ाने कापूरबसे ही, खासकर महात्मा गांधीके देशसे ही आयेगा, यह हम लोगोने बहुत पहले से धारणा बना रखी है। आप सौभाग्यशाली हैं कि आपके

यहां महात्मा गांधीके अनुयायी, आपके कार्यमें सहयोग दे रहे हैं।

साइटिकाकी प्राकृतिक चिकित्सा

सदा की भांति मैं शनिवारको दोपहरमें प्रकृति निकेतन गया। संध्याकी प्रार्थनामें नये रोगियोंमें एक पंजाबी महिला को देखा। पूछने पर मालूम हुआ कि वह तीन-चार दिन पहले दिल्लीसे आयी है। उनके पैरोंमें साइटिकाका दर्द है। दिल्लीमें देशी-विदेशी कई प्रकारके इलाज करायें, पर स्थाई लाभ नहीं हुआ। कुछ दिन पहले उनके पति 'प्रकृति निकेतन' में इलाज करानेवाले एक रोगीसे मिलने आये, तो यहां की सुव्यवस्था देखकर अपनी पत्नीको दिल्लीसे चिकित्सा कराने यहां भेज दिया। उनके पतिने दिल्लीमें प्राकृतिक चिकित्साके सम्बन्धमें श्री स्वामिनाथनके कई भाषण सुने थे और खान-पान के तरीकों को अपने जीवनमें उतार कर उससे लाभ भी उठाया था। पर इन बहनका प्राकृतिक चिकित्सा के सम्बन्धमें कुछ मानस नहीं बना था, इसलिये वह कलकत्ते आना नहीं चाहती थीं। जब
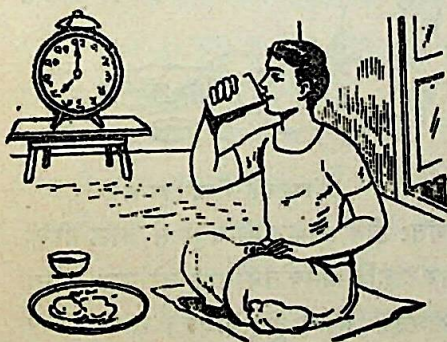
प्रातः का हल्का नाश्ता

इनके पतिने उन्हें यहां जबरदस्ती भेजा, तो वह बच्चोंकी तरह रोने लगीं। परन्तु वे उनके आंसुओंसे नहीं घबड़ाये और उन्हें कलकत्ते भेज ही दिया। यहां आने पर संस्थाको देखकर वह खुश हुई, पर चिकित्सकने जब उन्हें कुछ दिन उपवास करने

को कहा तो वह घवड़ाई । आस-पास कई रोगियोंको लम्बे-लम्बे उपवाससे लाभ उठाये देखकर वह छोटा उपवास करने को राजी हो गई । उस दिन मैंने भी उपवासके लाभोंकी बात कर उन्हें हिम्मत दिलायी ।

उपवास आरम्भ होनेके तीसरे या चौथे दिन वह घवड़ा गई अतः चिकित्सकको बाध्य होकर उन्हें फल रसपर रखना पड़ा । १५ दिनों तक फल–रस पर रहने और साथ-साथ प्राकृतिक चिकित्साके अन्य उपचारोंसे उन्हें काफी लाभ पहुंचा उनके चेहरे पर चमक आयी और शरीरमें स्फूर्ति भी । दो-तीन सप्ताह वाद जब मैं पुनः उनसे मिला तो वह बहुत प्रसन्न थी । कहने लगी मुझे वापस ले जानेके लिये सर-दारजी की चिट्ठियां आती हैं, पर मैं तो अब पूर्णतः ठीक होकर ही यहां से जाऊँगी । कुछ दिनों बाद जब मैं फिर प्रकृति–निकेतन गया तो उस बहन को बिना किसी सहारे बरामदेमें घूमते हुए पाया ।
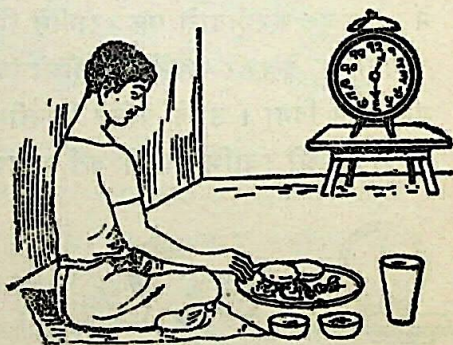
दोपहरके भोजनका समय

पथरी रोगकी प्राकृतिक चिकित्सा

गौ सेवाके क्षेत्रमें काम करनेवाले अधिकांश लोग पार-नेरकरजीको अच्छी तरह जानते हैं । उनकी पुत्री शरद डा० प्रभाकर जी माचवेकी पत्नी हैं । माचवेजी स्वनामधन्य साहित्य सेवी हैं । आजकल दिल्लीमें ही रहती हैं । आयु लगभग ४०

वर्षकी होगी। वह बता रहीं थीं कि, आजसे कोई १० वर्ष पहले उनके पेटमें ट्यूमर हुआ था जो बड़ा कष्ट दायक था। उसके लिए प्राकृतिक चिकित्साके पक्षमें जितना मानस तैयार होना चाहिये था, उतना तैयार न था। डाक्टरोंकी सलाह ली गई। उन लोगोंने आपरेशनकी राय दी। शरद जी आपरेशन से बहुत घबराती थी। इसलिए टालती रहीं। पर एक बार वेदना इतनी बढ़ी कि उन्हें डाक्टरोंकी सलाह माननी ही पड़ी और उनके आश्वासन देने पर कि आपरेशनमें जरा भी तकलीफ नहीं होगी, वह आपरेशन करवानेके लिए अस्पतालमें भर्ती हो गयीं।

आपरेशन सफलता पूर्वक हुआ और १५ दिनोंमें ही वह अस्पतालसे घर आ गयीं। ठीक होनेके बाद उनसे जो कोई ओवरीके ट्यूमरके इलाजके सम्बन्धमें पूछता तो मैं आपरेशन करा लेनेकी ही सलाह देती। ४ वर्ष बड़े आरामसे कटे। पर १९६०में मुझे फिर 'ट्यूमर' हो गया। आपरेशनके भयसे मैं मुक्त हो ही चुकी थी, इसलिए ट्यूमरके कष्टसे छुटकारा पानेके लिए मैं फिर अस्पतालमें भर्ती हो गयी। इस बार मुझे समय कुछ अधिक लगा, यानी १५ दिनके बजाय डेढ़ महीना अस्पतालमें रहना पड़ा और कष्ट भी अधिक हुआ। कष्ट तो इतना अधिक हुआ कि जब मैं उस कष्टकी बात सोचती हूँ तो मेरे रोंगटे खड़े हो जाते है।

१९६५ की बात है। मेरे गुर्दे (किडनी) में तीन स्टोन यानी पत्थर पैदा हो गये। डाक्टरोंने आपरेशनकी सलाह दी, पर पिछले आपरेशनोंमें कष्ट होनेके कारण मैं इतनी अधीर (नर्वस) हो गई थी कि इस बार आपरेशनके बजाय उसकी

प्राकृतिक चिकित्सा करानेकी बात सोची ।

प्राकृतिक चिकित्सामें लगभग हर रोगमें उपवास कराया जाता है । मैं बचपनसे ही उपवाससे भय खाती थी । हैदराबाद के प्राकृतिक चिकित्सकने मुझे समझाया, "आप जितने दिनों का उपवास आसानीसे कर सकेंगी उतने ही दिनोंका उपवास हम करायेंगे जिससे आपको किसी प्रकारका कष्ट नहीं होगा ।" संयोगकी बात थी कि 'गो संवर्द्धन'के कार्यसे पिताजीको हैदराबाद जाना था, मैं भी उनके साथ वहाँ चली गयी और यह सोचकर उपवास करनेको राजी हो गयी कि यदि उपवास नहीं करुंगी तो रोग अच्छा नहीं होगा और तब विवश होकर आपरेशनका भयंकर कष्ट सहना पड़ेगा । हैदराबादमें मेरा उपवास आरम्भ हुआ । दूसरे दिन तो कुछ पता नहीं चला, पर तीसरे दिन कुछ घबराहट सी मालूम हुई । उपवासके बारेमें मैं सुन चुकी थी कि किसी-किसी रोगीको उपवासके तीसरे दिन कुछ अधिक कष्ट होता है । मैं शाँत रही और चौथा-पांचवां तथा छठां दिन बड़े आनन्दसे कटा । मैं रोज सुबह डेढ़-दो मील और संध्या को भी डेढ़-दो मील

पैदल घूमती । उपवासके दिनोंमें दिनमें दो बार और कभी ३ बार केवल नीबूका पानी एक-एक गिलास लिया करती थी और प्रातः सायं स्थानीय गरम-ठंडा सेंक होता था ।

बिना कष्टके मैंने तीस दिन तक उपवास किया। जो लोग मुझे देखते, उन लोगोंको भी विश्वास नहीं होता था कि मैं इतने दिनों तक बिना कुछ खाये इतना कैसे घूम-फिर लेती हूं। उसके बाद एक महीने तक मैं कच्ची साग—भाजियों पर रही, तत्पश्चात दिल्ली चली आयी। दिल्ली आनेपर दो महीनेतक कच्ची और उबली सब्जियोंपर रही। उसके बाद पूर्णतः स्वस्थ हो गई। उपवासका भय मेरे मानससे इस प्रकार भागा कि अब तो जो कोई भी मुझसे सलाह करता है मैं उसे आपरेशन करानेके बदले 'प्राकृतिक चिकित्सा' करानेकी ही नेक सलाह देती हूं।

प्राकृतिक चिकित्साका जादू

भाई पारसमलजी जैन बोलाराम (आन्ध्र) वाले कलकत्ता आये हुये थे। मैंने उन्हें प्रकृति-निकेतन चलने के लिये कहा। वे राजी हो गये। निश्चित समयपर जब हमलोग प्रकृति निकेतन पहुँचे तब अन्य बातों के अलावा मैंने, उनसे उनका अनुराग प्राकृतिक चिकित्सासे कैसे हुआ आदि बातें पूछी। उन्होंने बताया हम अपने पिताकी दो सन्तान थे। पिताजी का देहान्त हमलोगों की छोटी अवस्थामें ही हो गया था। पुराने नियमोंके अनुसार हमारे परिवारमें भी डाक्टरी दवाका बोलबाला था। १९४५ में मेरे भाई बीमार पड़े और काफी चिकित्सा कराने के बाद भी हमलोग उन्हें नहीं बचा सके। इसी प्रकार मेरी पत्नीका भी स्वर्गवास हो गया। परिवारके एक-दो प्राणी और भी इसी तरह स्वर्गवासी हुए। परिवारके लोगोंमें और खासकर मेरी माताजी के हृदयमें इन आघातोंसे एक प्रकार का आतंक सा छा गया। संयोगकी बात,

१९४६ में मेरी छातीमें दर्द होने लगा। हमारे विश्वसनीय डाक्टर ने कैंसरका शक किया। उन्हीं दिनों क़ायदे आज़म जिन्ना को ख़ुदा मियां ने कैंसरका बहाना करके अपने पास बुला लिया था। मैंने भी सोचा सारे परिवारके लोग अब स्वर्ग में एक जगह ही एकत्र होंगे, ऐसा लग रहा है।

संयोगसे मेरे एक मित्र ने, जो प्राकृतिक चिकित्सामें आस्था रखते थे, मुझे समझाया कि जिस चिकित्सासे तुम्हारे घरके इतने लोग मौतके घाट उतरे, फिर भी तुम उसीसे चिपके हुए हो। मैंने कहा, उपाय ही क्या है ? उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी बहुत सी बातें बतायी, जो मुझे बड़ी अटपटी लगीं। फिर भी मैं बिना घरवालों की सलाह लिये अपने घरके पासके विजयवाड़ेके श्री सीताराम अवधूतके पास प्राकृतिक चिकित्सा कराने पहुँच गया। वहाँ तीन महीने रह कर लौटने पर जब अपने को पुराने चिकित्सकों को फिर दिखाया तो उन लोगोंने एक स्वरसे मुझे बिलकुल ठीक कहा, और पूछा, क्या दवाएं ली ? 'मैं तो बिना दवाके ठीक हुआ, किस दवाका नाम बताता ? उसके बाद मेरे ऊपर प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का पूरा रंग चढ़ गया, और इसका प्रचार कैसे हो इसके लिये मैं प्रयत्नशील रहने लगा। आन्ध्रके तथा देशके अन्य कई चिकित्सा केन्द्रोंमें गया और श्री वेंकटरावको भीमावरम्के स्वर्गीय श्री राजू से मांगकर लाया और अपने गांवमें इसका केन्द्र खोल दिया।

काम चलने लगा। होनहार की बात, मुझे मलेरिया ज्वर आ घेरा। उस समय मेरा वजन लगभग १३७ पौंड था। उपवास। रसाहार और पेड़ू पर मिट्टीकी पट्टीका क्रम २०-२५

दिन चला । वजन घटकर ९० पौण्ड हो गया । वाहर और घर के सबलोग घबराते थे, और चाहते थे कि मैं औषधि लूँ, पर मेरा विश्वास औषधियों से उठ चुका था, और मैं जानता था कि जब घरके और लोगोंको मैं औषधियों द्वारा नहीं बचा सका तो मैं कैसे बच जाऊँगा ? इसकी क्या गारंटी ? इसलिये जब मरना ही है तो बिना इन्जेक्शन और कड़वी दवाके ही क्यों न मरूँ ?
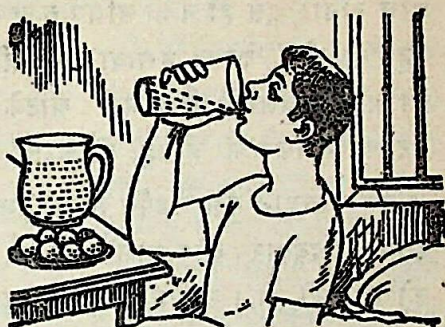
उपवास काल में रस और पानी पीना

चिकित्सा क्रम चलता रहा और मेरा वजन घटकर ७२ पौंड रह गया । बुखार बड़ा जिद्दी था, पिण्ड ही नहीं छोड़ रहा था । उतरने के बाद फिर पहले दिन जिस समय चढ़ता, उसके दूसरे दिन उससे एक घंटे पहले ही आकर मेरा दरवाजा खटखटाता । सब हैरान थे । एलोपैथीके चिकित्सक मित्र जिनसे पुराना सम्बन्ध था, चिकित्सा न करते हुए भी मुझसे मिलने और देखने आया करते थे । उन्हें यह चिन्ता थी कि मामला किनारे लगा है, न जाने कब कोलेप्स हो जाये । माता जी ने भी मेरे जीने की आशा छोड़ दी थी । एक दिन रात्रिको मुझे ऐसा लगा कि कुछ मल निकलेगा । और मैने माताजी से बैड पैन लानेके लिए कहा । पर उन्होंने सोचा कि जो व्यक्ति आज कई दिनों से कुछ खा नहीं रहा है और एनीमा देनेपर भी जिनकी अंतड़ियों से मल नहीं निकलता उसे स्वतः भला क्या

शौच होगा? इसे हो न हो सन्निपातका रोगहो गया है। इसलिये वह "बैड पैन" देनेका भुलावा देती रही और मेरी पत्नी बच्चों को अन्तिम दर्शनके लिये मेरी खाटके पास ला खड़ा किया। पर जब मैं फिर भी आग्रह ही करता रहा तब कहीं जाकर अन्तमें उन्होंने मुझे बैडपैन दिया जिसमें मैंने शौच किया। इतना बदबूदार और काला था कि उसकी सम्भावना किसी को भी नहीं थी। उस शौचसे मुझे बड़ा आराम मिला। उसके बाद भी लगातार तीन-चार दिनोंतक उतनी मात्रामें तो नहीं पर थोड़ी थोड़ी मात्रामें दूषित मल निकलता रहा। इस तरह जब आतें मल रहित हो गयीं तो बुखारने मेरा पिण्ड छोड़ दिया। उसके बादमें धीरे-धीरे स्वस्थ हो गया, और अब स्वस्थ हूँ।

यह बात विशेष रूपसे उल्लेखनीय है कि मेरा उपर्युक्त इलाज श्री वेंकटराव की देख–रेख में हुआ वह उस समय बोलारम में नये नये आये थे। मेरी अवस्था जब बिगड़ रही थी तब उनका सड़क पर चलना मुश्किल हो गया था। गांवके सभी लोग अगुलियाँ दिखाते थे और मेरे घरके सभी लोग श्री वेंकटरावसे कहते थे, पारस को तुम मारकर ही दम लोगे। पर मेरे ठीक हो जानेके बाद सारा वातावरण ही बदल गया और मेरे परिवारके सारे के सारे लोग इस प्रणालीके भक्त हो गये। फिर तो काम इतना बढ़ा कि वेंकटराव को बोलारमसे हटाकर हैदराबाद लाना पड़ा जहां वह आज ४० रोगियोंका अस्पताल चला रहे हैं और जिसको आन्ध्र सरकार भी सहायता दे रही है।

जलनेपर पानीका प्रयोग

बचपनमें एक पुस्तक मैंने पढ़ी थी जिसमें लिखा था कि एक व्यक्तिने हवामें एक तीर छोड़ा, मालूम नहीं वह कहां जाकर गिरा। इसी प्रकार घूमते हुए दूसरा व्यक्ति कोई गीत गुनगुनाने लगा, मालूम नहीं किसीने उसे सुना भी या नहीं। पर कुछ दिन बाद दोनों व्यक्ति घूमते हुये जा रहे थे कि एक वृक्षमें पहले व्यक्तिको वही तीर गड़ा हुआ मिला, और दूसरे व्यक्तिका वही गीत कोई गुनगुना रहा था। कहनेका तातपर्य यह कि दुनियामें कोई प्रयास व्यर्थ नहीं जाता।

फरवरीका महीना विवाहोंका मौसम होता है। हमारे मित्र श्रीचन्द मोदीके लड़केका व्याह था। मैं उनसे मिलने गया। अक्सर ऐसा होता है कि मैं जहां कही भी जाता हूं वहां कुछ देर तक इधर-उधर की चर्चा होनेके बाद प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी बातें स्वतः छिड़ जाती है। भाई श्रीचन्द मोदीके लड़केने कहा "स्वस्थ जीवन" में मैंने जलनेपर पानी के प्रयोगकी बात पढ़ी थी और एक-दो बार आपसे भी सुनी थी। एक दिन हमारे गंजीके कारखानेमें एक कारीगर मैदेकी लेई बनाकर ले जा रहा था। लेई काफी गर्म थी। संयोगबश लेई का बर्तन काफी बड़ा था और सामने पड़ा हुआ काठ
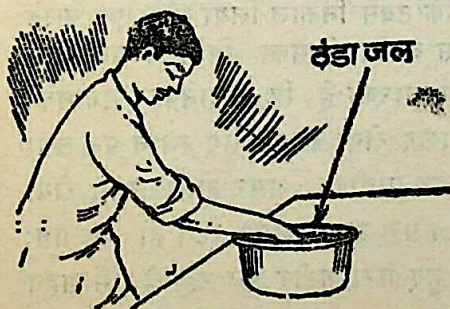
जलने का उपचार

का बक्सा उसे दिखाई नहीं दिया। लेईका बर्तन बक्से से

टकरा गया और गरम लेई उसके पेट, जांघ और पैरपर गिर पड़ा। वह चीखने चिल्लाने लगा। कारखानेमें तहलका मच गया। कारखानेके साधारण नियमोंके अनुसार रोगीको अस्प-ताल भेजना चाहिए था या डाक्टर को वुलाकर उसकी चिकित्सा करानी चाहिये थी, पर उस दिन जलेपर पानीका प्रयोग वाली बात मुझे याद हो आयी। अतः मैंने २०० लीटर के बड़े पीपेको जो कारखानेमें खाली पड़ा था, ठंडे पानीसे भरवाया और उसमें उस कारीगरको खड़ा कर दिया। थोड़ी देर ही खड़ा रहनेके बाद उसे बड़ी शान्ति मिली।

कारीगरके शरीरके गर्मीसे पीपेके पानीके गरम होनेपर उसमें वरफ डालनेकी हिदायत देकर मैं किसी जरूरी कामसे बाहर चला गया। मेरे वहांसे हटते ही कारखानेके लोग एकत्र होकर आपसमें कहने लगे वावूने पुलिसके डरसे रोगी को अस्पताल नहीं भेजा और रुपया बचानेके लिये डाक्टरको नहीं वुलाया तथा दवा भी नहीं लगायी। इस प्रकार पानीमें रहनेसे यह कारीगर मर जायेगा। अंतमें उन लोगोंने सलाह करके रोगीको उस पानीके टबसे निकाल लिया और एक चलते पुर्जे कारीगरने बाजारसे बर्नाल, जिसका विज्ञापन खुब होता है, और पढ़े लिखे लोगोंमें धारणा है कि जलनेपर लगानेकी वह रामबाण दवा है, लाकर रोगी के जले हुए स्थान पर लगा दी। जितनी देर शरीरपर पानीका असर होता रहा, रोगी को आराम मिलता रहा। पर उसका असर हटते ही वह पुनः चिल्लाने लगा यह कहते हुए मेरा शरीर जल रहा है। मैं सहन नहीं कर सकता। मुझे तुरन्त पानीमें फिर डालिये। बाध्य होकर लोगोंको उसे उसी टबमें पुनः। ५–६ घंटे बैठानेके बाद

उसकी जलन शान्त हुई। तत्पश्चात टैक्सीसे उस कारीगरको उसके घर भेज दिया गया और उसे समझा दिया कि यदि रातमें जलन फिर आरम्भ हो जाय तो पानीकी पट्टी जले हुये स्थानपर बांध लेना।

कारखानेके कारीगरोंको वहुत आश्चर्य हुआ जव उन्होंने देखाकि उसका साथी बिना औषधिके केवल पानीके प्रयोगसे विल्कुल ठीक होकर दूसरे दिन काम पर आ गया।

जलनेपर पानीके प्रयोगकी वात लोगोंको बड़ी अटपटी सी जान पड़ती है। और उनका विश्वास है कि जलेपर पानी लगानेसे फफोला पड़ जाता है। पर भले आदमियोंको मालूम नही कि जलनेपर सबसे सुगम, सस्ती और अच्छी दवा पानी ही है। जव शरीरका कोई अंग जल जाये तो उस स्थानको ठंडे पानीमें डुबा देना चाहिये और उसे तवतक डुबोए रखना चाहिए जवतक पानीसे बाहर निकालने पर उस अंगमें जलन न मालूम पड़े। साधारण रूपसे जले हुए स्थान को १०–१५ मिनट तक पानीमें डुबा रखनेसे वह ठीक हो जाता है। पर अधिक जलनेपर एक-दो घंटा तथा बहुत जल जानेपर ४८ घंटे या इससे अधिक देर तक जले स्थानको पानीमें रखना पड़ता है। यदि किसी कारण से जला हुआ स्थान पानीमें न डुवाया जा सके तो उसपर मिट्टीकी गीली पट्टी लगानी चाहिए और आध-आध घंटे बाद उसे बदलते रहना चाहिये।

हार्नियामें प्राकृतिक चिकित्सा

आजकल हार्नियाकी शिकायत बहुत लोगोंको होती है। कुछ लोग आपरेशन कराते हैं, कुछ लोग जीवन पर्यन्त कमरमें कड़ा पहनना स्वीकार करते हैं। पर मैं कितने ही रोगियोंको

जानता हूं, जिन्होंने हार्निया होते ही प्राकृतिक चिकित्साकी शरण ली और खान-पान बदलनेके साथ स्थानीय मिट्टीकी पट्टी एवं सर्वांगासन किया और उन्हें हार्निया रोगसे बिना आपरेशनके ही मुक्ति मिल गयी।

गत महीनेमें जैन भवनके ट्रस्टी मंडलकी बैठकमें शामिल होने गया था। एक जैन भाई, जिनकी आयु ५५ वर्ष की होगी, मुझसे मिलने आये। उन्होंने बताया कि मुझे साधारण हार्नियाकी शिकायत तो लगभग १०–१२ वर्षोंसे है, जिसके लिए कड़ा बाँधता हूँ। पर पिछले एक वर्षसे मुझे
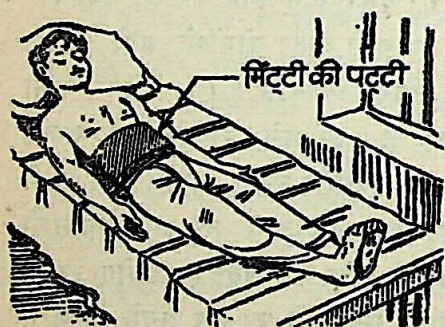
पेटकी हार्निया (एवडोमिनल हार्निया) हो गया है जिसकी साइज लगभग टेनिस बालके बराबर है। डाक्टर आपरेशन की राय देते हैं, पर मैं आपरेशनसे घबड़ाता हूँ। मैंने उन्हें प्रकृति निकेतनमें कमसे कम २ महीने रहनेकी सलाह दी। वे भर्ती हो गये और आज लगभग २५ दिनकी चिकित्साके बाद जब उन्होंने हार्नियाको देखा तो उसकी साइज छोटी थी, साथ ही नर्म भी थी। उस भाईसे चर्चा की तो कहने लगे कि प्राकृतिक चिकित्सा मैंने पहले पहल करायी। इन २५ दिनोंमें जो लाभ हुआ है, उसे देखकर मुझे विश्वास होता है कि यह बिलकुल ठीक हो जाएगी।

जब इन भाईसे बात कर रहा था तो मेरे सामने आजसे

तीस वर्ष पुरानी एक घटना नाचने लगी। मेरे परिवार की एक महिलाको, जो रिश्तेमें मेरी भाभी लगती थी, इसी प्रकार की पेटकी हार्निया हो गयी थी। उन्होंने पाँच-सात वर्षों तक तो कोई इलाज नहीं कराया, पर अन्तमें डाक्टरोंके प्रभावमें आकर आपरेशन करानेका निश्चय किया। उन दिनों वे राँची में रहती थी और मैं कलकत्तामें रहता था। संयोगवश आपरेशन कलकत्तामें करानेकी बात थी, इसलिये आपरेशन कराना या नहीं कराना मेरी रायपर छोड़ दिया गया। उन दिनोंमें एलोपैथिक चिकित्सा प्रणालीका भक्त था। इसलिए मैंने आपरेशन करानेकी अवश्य राय दी। आपरेशनमें दो घंटेका समय लगा। चिकित्सकोंने फतवा दिया कि आपरेशन सफल हुआ। पर दो–तीन दिनके बाद ही वे गुजर गयीं। मुझे बड़ा दुःख हुआ। आज सोचता हूँ कि उस समय यदि मैं प्राकृतिक चिकित्साका भक्त होता तो उन्हें आपरेशन कराना नहीं पड़ता और शायद बच भी जातीं।

कैंसर और प्राकृतिक चिकित्सा

स्वास्थ्यके विषयमें मनुष्य सदासे लापरवाह रहा है। आरम्भमें उसकी ओर वह बिल्कुल ध्यान नहीं देता। जब कोई समझदार व्यक्ति उसे सलाह देता है, तो वह उसकी बातोंको मजाकमें उड़ा देता है। शानमें आकर कुछ लोग यह भी कहते हैं, "अपने राम तो इन सब बातोंकी ओर ध्यान नहीं देते; जो मिलता है खाते हैं सब हजम हो जाता है।" ऐसे लोगों द्वारा गलतियाँ होनेपर जब प्रकृति बीमारीके रूपमें उन्हें दण्ड देती है, तो उसपर भी वे कुछ ध्यान नही देते और यह कहकर टाल देते हैं, "मनुष्य शरीर तो व्याधियोंका घर है। कभी-कभार

मौके-बे-मौके यदि कोई साधारण सी बीमारी हो ही गई तो उससे घबड़ाना क्या ? औषधि लेकर ठीक कर लेंगे ।"

पर इस मनोभावनाका फल यह होता है कि जब वर्षों बाद कोई बड़ी बीमारी आकर उसका गला दबोच लेती है तो वे अत्यधिक घबड़ा जाते हैं और तब चिकित्सक नामधारी व्यक्तियों को आँख मूँदकर अपना शरीर और धन सब सौंपने को तैयार हो जाते हैं। उस समय चिकि-

रोगका कारण
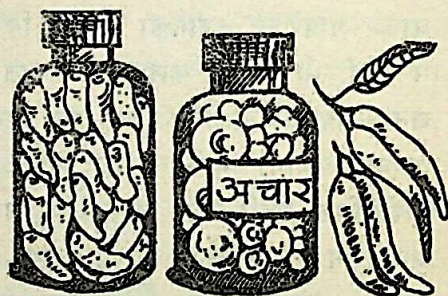
त्सक जो कुछ भी कहते हैं, उसे वे मानते हैं। और उस समय सबकी माता प्रकृतिको, जिसने उनके शरीरको बनाया हैं, भूल जाते हैं। वे नहीं सोचते कि वे जब गर्भमें आये उसके पहले उनकी माता वही भोजन करती थीं जो उनके गर्भमें आनेके बाद करती थी। उदरमें भ्रूणकी नाक, कान, आँख, पैरकी अँगुलियों और सिरके बालोंके निर्माणके लिए कभी किसी माता ने कभी कोई इंजेक्शन, कैपसूल या कोई विशेष प्रकारकी दवाई नहीं खायी। यही बात हर व्यक्तिपर लागू होती है चाहे वह किसी भी देश या जातिका हो, किसी भी प्रान्तका हो, तथा किसी भी सम्प्रदायका हो। जब प्रकृति, गर्भिणीके पेटमें गर्भके विकासके लिए सब आवश्यक चीजें जुटा सकती है तो क्या गर्भ के बाहर वह मनुष्यकी बिगड़ी हुई दशाको सुधार नहीं सकती? अवश्य सुधार सकती है। केवल आवश्यकता है मनुष्यके सूक्ष्म-

बूझकी, प्रकृतिके काममें मदद देने की और उसके मार्गमें रोड़े न अटकानेकी।

पर हम अपनी गलतियोंके कारण अपना आत्मविश्वास खो बैठते हैं और दवाओं और चिकित्सकोंके फेरमें पड़कर अपने स्वास्थ्य और धन दोनोंको बर्बाद कर देते हैं।

एक दिनकी बात है मै सोसायटीमें बैठा हुआ था। मेरे एक रिश्तेदारकी चिट्ठी लेकर एक व्यक्ति आये। कहने लगे, छह महीने पहले मेरी पत्नीको कैन्सर बताया गया। मैं उसे कलकत्ता लाया, फिर बंबई

कैंसरका कारण

ले गया तथा अन्य कई स्थानोंपर भी ले गया। अब तक लगभग ३० हजार रुपये खर्च हो चुके हैं पर लाभ कुछ नहीं हो रहा है। अक्ल काम नहीं कर रही है, बताइये, क्या करूं?

मैंने उस भोले व्यक्तिको सान्त्वना देते हुए कहा, "अक्ल काम करती तो आज यह नौबत ही क्यों आती। आरम्भसे ही यदि व्यक्ति सतर्क रहे तो प्रथम तो भयंकर बीमारियाँ आती ही नहीं, और यदि किसी करणवश हो भी जाय तो प्रकृतिकी शरण लेनेसे वे आपसे आप दूर हो जाती हैं।

गत २०-२२ वर्षोंमें जबसे मुझे प्राकृतिक चिकित्साका शौक लगा, मैं कैन्सरके लगभग दस-बारह स्त्री-पुरुष रोगियोंसे,

जिससे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे पहलेका परिचय था— मान न मान मैं तेरा मेहमान वाली कहावतके अनुसार मिला, और उनमें जो धनी व्यक्ति थे उनसे अमेरिकाके चिकित्सा केन्द्रकी चर्चा की, तथा साधारण स्थितिके लोगोंको आन्ध्र प्रदेश भीमावरम केन्द्रके बारेमें बताया, जहाँ
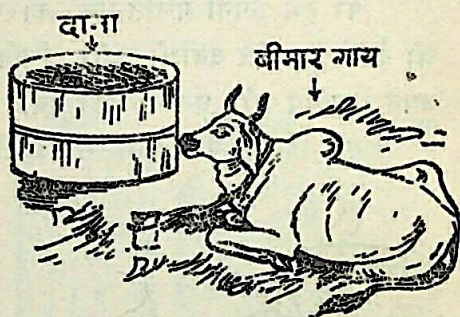
कैंसरका कारण

पहली स्थितिके कैन्सरके रोगी बिना चीर-फाड़के प्राकृतिक-चिकित्सा द्वारा सफलतापूर्वक ठीक किये जाते हैं और ठीक हुए हैं। पर रोगी और रोगीके घरवाले भी क्या करें? उन्हें डाक्टर नामधारी आधुनिक चिकित्सकगण अपने चक्करसे मुक्त करें तब तो?

फलतः मैं जब उनसे औषधिके बजाय प्राकृतिक चिकित्सा करवानेकी सलाह देता हूँ तो वे उसे अनसुनी कर देते हैं पर बहुतसे रोगी कैन्सरका आपरेशन आदि करा लेनेके बाद जब उन्हें लाभ नहीं होता तब प्राकृतिक-चिकित्साकी शरण ग्रहण करना चाहते हैं। परन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी होती है।

गरम ठंढे की विधि

पुराने जमानेसे लोगोंकी गलत धारणा जमी हुई है कि एक साथ गरम ठंढेका प्रयोग करनेसे नुकसान होता है। आज भी अक्सर लोगोंको यह कहते सुनता हूँ "बाहर घूम कर आया, शरीर गरम था, पानी पी लिया, सर्दी लग गयी, तथा धूपमें

घूमकर आया, एयर कंडीशन कमरेमें घुसा, खांसी आने लगी या ज्वर आ गया आदि।" उन भोले व्यक्तियोंकी बातें सुनकर हमें हँसी आती है।

जिस प्रकार पुराने विचारोंके लोगोंकी उपर्युक्त बातें सुनकर हमें हँसी आती है, उसी प्रकार हम जब प्राकृतिक चिकित्साके नियमोंके अनुसार किसीको गरम-ठढ़ा सेंक या गरम-ठंढ़ी पट्टी या गरम–ठंढ़ा कुल्ला करनेकी राय देते हैं तो वे आश्चर्य-चकित हो हमारी भी बातों पर हँसते हैं और हमारे मुँहकी ओर देखने लगते हैं। कुछ लोग तो साहसकर यह भी पूछ बैठते हैं कि ऐसा करनेसे कोई हानि तो न होगी ? फिर भी समझदार लोग बिना किसी शंकाके उन उपचारोंका प्रयोग करते हैं और लाभ उठाते हैं। नीचे कुछ अनुभूत प्रयोग दे रहा हूँ। इनसे मालूम हो जायेगा कि गरम-ठंढ़ेमें कितना जादू है।

एक व्यक्तिके बायीं आंखके नीचेकी पलकमें छोटी-सी फुंसी हो गयी। फुंसीका रंग आस-पासमें लाल और बीचमें सफेद था। आंखमें काफी वेदना थी। एक-दो दिन तकलीफ उठानेके बाद उसने मुझसे सलाह ली। मैंने उसे गरम–ठंढ़ेका प्रयोग बताया। उसे गरम पानीमें गमछाको भिगोकर और निचोड़कर उसे फुंसी पर रखा और ५ मिनटके भीतर २–३ वार सहता-सहता गरम सेंक किया। फलतः फुंसी आधी रह गई। सेंकके बाद उसने ठंढ़े पानीमें भीगा हुआ गमछा रक्खा। लाभ और अधिक हुआ, फिर तो उसका विश्वास जम गया। दोपहर और संध्याको भी उसने यही प्रयोग किया। इस तरह बिना औषधि अथवा इन्जेक्शनके ही उसकी फुंसी ठीक हो गयी।

एक मित्रका दाहिना अण्डकोष फूल गया था। उन्होंने

वताया, अण्डकोषमें वेदना है, और वह साधारण नापसे सवाया वड़ा भी हो गया है, साथ ही स्थानका रंग कुछ लाल भी है। मैंने उनसे भी ३ मिनट गरम और एक मिनट ठंढ़ा प्रयोग की वात कही। दो दिनों बाद मिलनेपर उन्होंने वताया कि गरम-उन्होंने केवल चार-पांच बार ही किया और उतनेसे ठंढ़ेका प्रयोग ही उनका अण्डकोष साधारण अवस्थामें आ गया।

एक मित्रको गुदाके पास एक फुंसी निकली। वे घव-ड़ाये। क्योंकि उनके कई मित्रोंको भगंदरकी बीमारी हो चुकी थी और डर रहे थे कि कहीं वह बीमारी उनको भी न हो जाय। अतः वह मुझसे चिकित्सा पूछने आये। मैंने गरम-ठंढे की वात उनसे भी कही। पहले तो यह चिकित्सा उन्हें नहीं जंची। फिर बाद को उन्होंने सोचा इस चिकित्सामें खर्च तो कुछ लगता नहीं करनेमें क्या हर्ज है ? यदि लाभ न भी हुआ तो दवा फरोश और सर्जन कहीं जाते थोड़े ही हैं। किसी तरह उन्होंने मेरी बात मान ली और दो-तीन दिनों तक गरम-ठंढेका प्रयोग किया। फिर जब मिले तव कहने लगे कि, "भाई साहब गरम-ठंढेका प्रयोग सचमुच जादूका-सा काम करता है।"

छूतकी बीमारियोंके लिये टीका आवश्यक नहीं

मोरारजी भाईके सादे जीवनकी वात जो कभी 'स्वस्थ जीवन' में छपी थी, उसे बहुतसे मित्रोंने पसन्द किया। कई पत्रकार वन्धुओंने उसे उद्धृत भी किया। दूसरी बार जब मैं गो संबर्धनकी बैठकमें शामिल होनेके लिए दिल्ली गया, तो कलकत्तेके प्रकृति निकेतन ट्रस्टके अन्तर्गत निर्मित होने वाले भारतीय प्राकृतिक विद्यापीठकी प्रगतिसे परिचय करानेमें श्री

मोरारजी भाईके पास भी गया। उस समय बजट सम्बन्धी हलचलके होनेके बावजूद भी उन्होने कृपापूर्वक १० मिनटका समय मुझे दिया। मैं जब उनके पास पहुंचा तो वह शान्तभाव से चरखा कात रहे थे। बजटकी उस समय बड़ी-बड़ी आलो–चनाएं हो रही थीं, परन्तु मैंने देखा कि उनके चेहरे पर परे–शानीके कोई चिन्ह न थे। मैंने बातचीत शुरूकी। जो काम कलकत्तामें हो रहा था उसका परिचय प्राप्तकर वह प्रसन्न हुए। जब मेंने उन्हें उस भवनमें कारनर स्टोन लगानेके लिए निमन्त्रित किया तो उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक उस कामके लिए अप्रैल या मई में अपना अमूल्य समय देनेका आश्वासन दिया।

वहाँसे लौटनेके बाद उनके परम मित्र छगन भाई जोशी से बातचीत हुई। उन्होंने बातचीतके सिलसिलेमें एक बहुत पुरानी घटनाका उल्लेख किया, जिससे पता लगा कि मोरारजी भाई इन्जेक्शनों और दवाओंके कितने विरोधी हैं।

ब्रिटिश राज्य–कालकी बात है उन दिनों मोरारजी भाई गुजरातमें एक अंग्रेज कलक्टरके नीचे डिप्टी–कलक्टर थे। संयोगसे उनके बच्चेको चेचक निकली। कलेक्टरने यह समझ
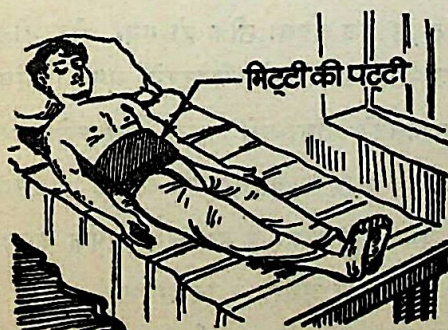
कर कि चेचक एक छूतकी बीमारी है, वह परिवारके अन्य व्यक्तियोंको न हो जाय, उनके मकान पर सिविल सर्जनको भेजकर सारे परिवार वालोंको टीका लगवा

लेनेका आदेश दिया और चेचक निकले चिकित्सा डाक्टरी ढंगसे बच्चेकी करनेकी सलाह दी पर मोरारजी भाईने कहाकि बच्चा मेरा है। उसकी चिन्ता मुझे अधिक है। मैं उसेइस हालतमें किसी प्रकारकी औषधि नहीं दूंगा और मैं और मेरे घरवाले टीकेमें विश्वासभी नहीं करते, इसलिए हम लोग टीका भी नहीं लेंगे।

बेचारा सिविल सर्जन, इस दृढ़ताके सामने कुछ न कर सका और वापस लौट गया। कलेक्टर साहब बहुत नाराज हुए और मोरारजी भाईके ड्यूटी पर पहुंचनेपर उनसे कुछ कहा सुना। मोरारजी भाईने कहा, "चेचककी बीमारीसे मैं नहीं डरता। पर आप डरते हैं। इसलिए मैं १० दिनकी छुट्टी लेता हूँ। इतने दिनोंमें मेरा बच्चा भी ठीक हो जायेगा। तब मैं आफिसका काम आकर सम्भालूंगा।" रोगीको मोरारजी भाई पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी, सम्पूर्ण शरीरकी गीली पट्टी और पानी एवं फलका रस देते रहे।

प्राकृतिक ढंगसे जब बच्चा ठीक हो गया और मोरारजी भाई कामपर वापस आये तो कलेक्टरने अपने विशेषज्ञोंको भेजकर उनके मकानको औषधियों द्वारा डिसइन्फेक्ट कराना चाहा और मोरारजी भाईको बताया कि आपके घरमें चेचक का प्रकोप इतने दिनों तक रहा है इसलिये आपके कपड़े और कागजातमें चेचकके क़ीटाणु अभी भी विद्यमान है। ऐसी हालत में यदि आप काम पर आयेंगे तो यह बीमारी औरोंको अवश्य

लगेगी और कष्ट देगी पर मोरारजी भाई चूंकि दवाइयोंके पक्ष-पाती नहीं थे, इसलिए उन्होंने कहा, "मैं महीने दो महीनेकी छुट्टी लेकर बाहर घूमने जा रहा हूं। इतने दिनोंमें चेचकके

सम्पूर्ण शरीरकी गीली पट्टी

कीटाणु मेरे शरीर, मेरे कपड़ों और कागजोंसे अवश्य निकल जायेंगे। यह कहकर दो महीनेकी और छुट्टीकी अर्जी लिखकर उन्होंने कलेक्टर साहबको थमा दी !

कलेक्टर साहब घबराये और सोचा कि पिछले दिनों मोरारजी भाइके काम पर न आनेसे काम यों ही रुका पड़ा है, यदि वह इतने दिनोंकी छूट्टी और ले लेते हैं तो न जाने कितना काम रुक जायेगा। साथ ही मोराराजी भाईकी इतनी दृढ़ताको देखकर वह उनके बच्चोको देखने उनके घर गये और वच्चेको पूर्णतः स्वस्थ पाकर वह मोरारजी भाईसे बोले कि छुट्टी न लें। कलसे आफिसमें आकर आप अपना काम सम्भाल लें।

लकवा और उसकी चिकित्सा

लकवा अधिकतर उन्हीं लोगोंको मारता है, जो उच्च रक्तचापके रोगी होते हैं। लकवा वाले रोगियोंसे पूछनेपर पता चला कि वे उसके पहले वर्षोंसे रक्तचापके रोगी रह चुके थे। इसका उन्हें पता नहीं था। पर जांच करने पर मालूम हुआ

कि वे उच्च रक्तचापकी बीमारीसे पीड़ित थे। पिता जी को भी जब एक बार रक्तचापकी बीमारी हुई तो मैंने उनसे यही कहा था कि रक्तचाप होनेपर यदि सावधानी न बरती जाये तो उसका दौरा होनेपर मृत्यु हो सकती है या लकवा मार सकता है। पिताजी समझदार और कर्मठ व्यक्ति थे, उन्होंने अपना खानपान तुरन्त बदल दिया और अन्त समय तक सक्रिय जीवन व्यतीत करते रहे।

लगभग सात वर्ष पहले उन्हींकी सेवामें रहनेवाला एक व्यक्ति' जिसकी उम्र केवल ४० वर्षकी थी, पर देखनेमें ५५ वर्षका लगता था, एक दिन सुबह स्नान आदिके बाद हमारे मकान के सामने वाले पीपलके
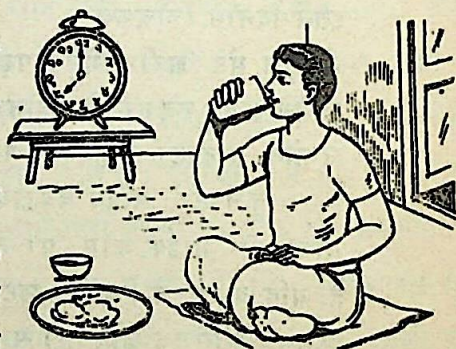
प्रातःका नाश्ता

वृक्षपर जल चढ़ाकर सूर्य भगवानको अर्घ्य दे रहा था कि उसे आधे अंगका लकवा मार गया। वह उस वक्त अपना लोटा न उठा सका, लंगड़ाने लगा और मुंह टेढ़ा हो गया। मेरे पास किसी तरहसे पहुंचकर उसने कातर दृष्टिसे मेरी ओर ताका और लड़खड़ाती जबानसे कहने लगा—"मेरा जीवन बर्बाद हो गया। मैं क्या करूँ ? न तो मेरा हाथ ही उठ सकता है और न मैं ठीकसे बोल ही पाता हूँ।" मैं उसे उसी समय गाड़ी में बैठाकर सोसाइटीके अस्पताल ले गया और प्राकृतिक चिकित्सा
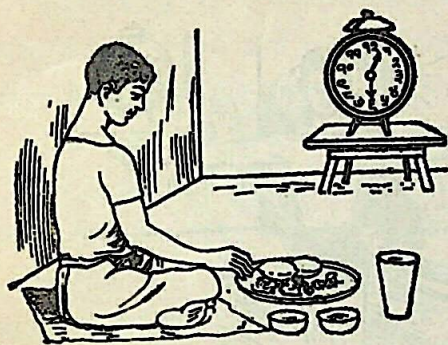
दोपहरका भोजन

विभागमें भर्ती करा दिया। वहां वह केवल सात दिन रहा और इतने ही दिनोंमें वह भला चंगा होकर पुनः अपने कामपर लग गया। उसके इस चमत्कारपूर्ण लाभको देख कर कितने ही लोग बड़े प्रभावित हुए। उसके लकवेका समाचार सुनकर उसका लड़का गाँवसे कलकत्ता आया जिसे यह विश्वास ही नहीं हो रहा था कि उसके पिताको लकवा मार गया था।

उक्त घटनाके दो वर्ष बाद सोसाइटीके प्राकृतिक चिकित्सा विभागमें ही पीलियाका इलाज करानेके लिए पुरुलियाके एक भाई भरती हुए। पन्द्रह दिनोंमें उनकी बीमारी रुपयेमें पन्द्रह आना ठीक हो गयी। सोलहवें दिन उनके मुंहपर अचानक लकवेका असर हो गया। जब मैं उन्हें देखने गया तो वह रोकर लड़खड़ाती जबानसे कहने लगे, "मैं तो यहाँ आकर फंस गया, मेरी यह क्या दशा हो गयी ?" मैंने उन्हें सान्त्वना दिलाते हुए कहा, "आप भाग्यशाली हैं कि यह बीमारी आपको यहां हुई। आप एक दो हफ्तेमें ठीक हो जायेंगे। यही बीमारी यदि आपको कहीं दूसरे स्थानपर हुई होतीं और आप औषधियोंके चक्करमें पड़ जाते तो अच्छा होनेमें वर्षों लग जाते, या बिल्कुल ठीक नहीं होते।

उन्हें कुछ ढांढस बंधा। धीरे-धीरे उन्हें लाभ भी होने

होने लगा और कुल तीन सप्ताहमें उनका पीलिया और लकवा दोनों रोग ठीक हो गये और वह अपने घर वापस चले गये। उनके भोजनमें सुधार एवं प्रातः व्यायाम कराया गया।
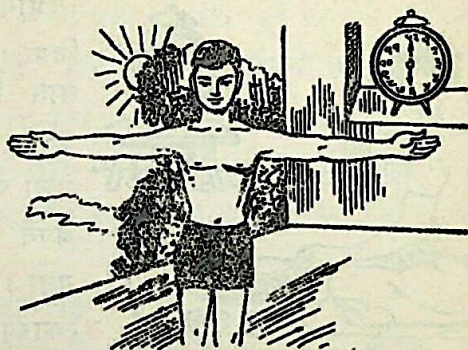
प्रात.कालका व्यायाम

और एक बारकी बात है, एक राजस्थानी बन्धुको दो–ढाई वर्ष पूर्व लकवेकी शिकायत हुई। वह रसोइयेका काम करते थे। लगभग दो वर्ष तक हर तरहकी औषधियां ली और एक स्थानीय अस्पतालमें भी दो वर्ष तक पड़े रहे पर कोई लाभ नहीं हुआ। उनकी माँने एक दिन सोसाइटीके प्राकृतिक चिकित्सा विभागमें श्री झूमरमलजी बड़इचसे अपनी दुःखगाथा कही। उन्होंने उसके बेटेको सोसाइटीमें भरती करा दिया। इलाज होने लगा और धीरे-धीरे लाभ भी। भर्ती होते समय उनके मुंहसे बोली नहीं निकलती थी, केवल रोया करते थे। हाथ नहीं उठते थे। चलते समय गिरनेका भय रहता था। पर बादमें उनकी दशामें सुधार होने लगा। एक दिन उन्होंने प्राकृतिक चिकित्साकी महिमापर एक बड़ी सुन्दर कविता बनाई। पढ़कर सुनायी। हाथ उनका उठने लगा था। पर उसमें पूरी शक्ति अभी नहीं आयी थी। उन्होंने पहले काफी औषधियां खायी थीं, इसलिए उनका विष निकलनेमें समय लगना स्वाभाविक ही था।

लोहे की दलाली करने वाले एक मित्र एक दिन व्यायामशाला में मुझसे मिलने आये। इन्होंने प्राकृतिक चिकित्साके चमत्कारके बारेमें बहुत कुछ सुन रखा था। मैंने सोचा, किसी व्यापारिक कार्यसे आये होंगे। पूछनेपर लड़खड़ाती हुई जबानसे कहने लगे, मुझे कलसे लकवा मार गया है। मैंने पूछा, 'कोई औषधि ली है?' उन्होंने कहा—नहीं। फिर पूछा, 'पहले कभी यह रोग हुआ था?' बोले 'नहीं।' मुझे आशा बंधी। मैंने उन्हें सोसायटीके प्राकृतिक चिकित्सा विभागमें पन्द्रह दिनके लिए भरती हो जानेके लिए कहा और यह भी बताया कि भाग्यसे आप बिना किसी प्रकारकी औषधि लिये आये हैं, इसलिए सात दिनोंमें ही ठीक हो जायेंगे। और यदि देर लगेगी भी तो १५ दिनसे अधिक नहीं लगेंगे। वे मान गये और भरती हो गये। सात दिनमें ही उन्हें पूर्ण लाभ हो गया, मगर वह १५ दिन रहकर ही गये।

लकवा होते ही औषधियोंके चक्करमें न पड़कर यदि रोगी किसी प्राकृतिक चिकित्सालयमें जाकर भर्ती हो जाय और उसे वहाँ उपवास कराया जाय और जब उपवास तोड़ा जाय तब नमक बन्दकर रसाहार कराया जाय तो बहुत जल्दी लाभ होता है।

श्री मोरारजी भाईका भोजन

बहुत दिनोंसे सुन रखा था, भगवान जो करता है, हमारे भलेके लिए करता है। इस विचारकी राजा और फकीरकी एक कहानी बचपनमें सुनी थी। परन्तु अपने जीवनमें जब कोई अधिक घटना घटती है तब पहले तो बुरा लगता है, पर जब उसका अन्तिम फल अच्छा जाता है तो वह पुरानी कहावत

पुनः याद हो आती है कि भगवान जो करता है अच्छा ही करता है।

श्री ढेबर भाई ने परिषदका भार दो चुनाओंमें ग्रहण करनेके बाद जब तीसरी बार न ग्रहरण करना चाहा तो मुझे बड़ा दुःख हुआ। पर जब ढ़ेबर भाईने सभापतिके चुनावकी जिम्मेदारी अपने ही ऊपर ले ली तो मुझे संतोष हुआ। उन्होंने श्रीमन्‌जी को इस पदके लिए राजी किया। श्रीमन्‌जी ने जब सभापतित्वका कार्यभार संभालकर प्राकृतिक चिकित्साके कार्य को तत्परता पूर्वक आगे बढ़ाया तो वही किंबंदती फिर याद आयी कि भगवान जो करता वह अच्छा ही करता है।

श्रीमन्‌जीके सुझाव और प्रयत्नसे श्रीमोरारजी देसाईने प्राकृतिक चिकित्सा विद्यापीठके बनने वाले भवनका कोण-शिलांयास करना स्वीकार किया। कलकत्ताके मित्रोंमें भी उसके लिए काफी उत्साह था। भाग्यसे बंगालके मुख्यमंत्री श्री पी० सी० सेन भी अध्यक्षताके लिए राजी हो गये और समारोह सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। मोरारजी भाईने जब मेरे यहां भोजन करनेका निमन्त्रण स्वीकार किया तो उनके भोजनका विवरण जिसमें वे क्या खाते हैं, क्या नहीं खाते, पूर्व सूचनाके रूपमें मेरे पास पहले ही आ गया। वह इस प्रकार था—

सुबहका जलपान—गायका दूध, बिना चीनीके।

दोपहरका भोजन—चपाती चोकर सहित आटेकी, रोटी या टोस्ट। बिना मिर्चका साग, जैसे गोभी, मटर, शलजम, घीया, आदि। कच्चे शाकोंमें गाजर, खीरा, मूली, प्याज आदि।

भोजनमें वे चीनी नहीं खाते। मिठाइयां यदि बनाई जायें तो शहद, गुड़ या खांडसारीकी।

पुराना चावल ढेकीका कूटा, बिना पालिशका।
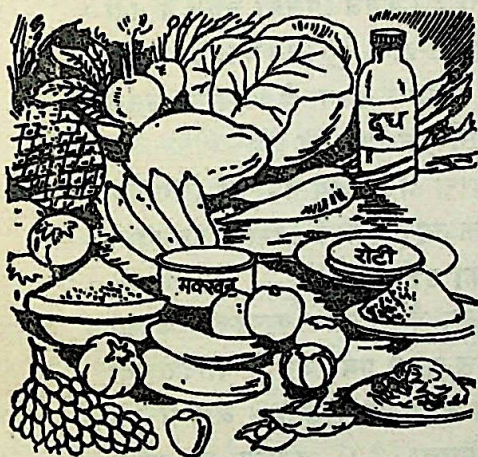
जीवन शक्तिदाता आहार

तली हुई चीजें, मूड़ी आदि और टमाटर, आलू, मिर्च, पनीर, पत्ती वाले शाक वे नहीं लेते।

फलोंमें रस वाले फल जो खट्टे न हों।

रात्रिका भोजन—मीठे ताजे फल, जैसे संतरा, पपीता, केला, अंगूर आदि। या खांडसारीकी बनी मिठाई।

सूखे मेवेमें खजूर, बादाम, काजू आदि, और बिना चीनी का दूध।

श्री मोरारजी भाई जब वापस जानेके लिए हवाई अड्डे पर पहुंचे तो वहां कई मित्र और भी उपस्थित थे। वहां स्वास्थ्य सम्बन्धी और खासकर प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी चर्चा चल पड़ी। एक स्थानीय मन्त्रीने व्यंग्यमें कहा कि जब मनुष्य मोरार जी भाईके कहनेके अनुसार चाय भी न पिये, काफी भी न पिये, मिठाई भी न खाये तो ऐसे जीनेसे फायदा ही क्या ?

श्री मोरारजी भाईने हंसते हुए कहा, चाय, काफी और सिगरेटको आज सभी वैज्ञानिक स्वास्थ्यके लिए हानिप्रद बताते हैं। रही बात मीठेकी सो मैं मीठा रोज खाता हूं, आपसे अच्छा

और स्वास्थ्यकर। मिठाई मुझे खजूरोंमें मिलती है, शहदमें मिलती है, खांडसारीमें मिलती है। केवल मिलकी चीनी मैं नहीं खाता जिसमें केवल कार्बोहाइड्रेट होता है, जिसे अधिक शारीरिक श्रम करने वाला व्यक्ति ही पचा सकता है। क्योंकि उसके सभी उपयोगी खनिज लवण निकाल दिये गये हैं।

इसके बाद उन्होंने अपने द्वारा ठीक किये गये कई रोगियोंके अनुभव भी सुनाये। वह व्यक्ति उनके उत्तरसे निरुत्तर हो गया।

गठिया का दर्द गया

काशीनाथ शर्मा दिगम्बर जैन मन्दिर कलकत्ता के गत कई वर्षों से कार्यकर्ता हैं। कुछ समय पूर्व जब मैं मन्दिर गया तो वे मुझसे कहने लगे कि मैं साधारण स्थितिका आदमी हूँ। यहाँ केवल ७० रु. मासिक मिलता है। लगभग दो वर्षोंसे गठियासे पीड़ित हूँ। घुटने और जोड़ोंमें दर्द होता है। काम करते समय बैठे-बैठे जब उठता हूँ, तो दर्द और बढ़ जाता है। अब तक डाक्टर और वैद्योंसे अपनी शक्तिभर चिकित्सा करायी। काफी रुपये खर्च किये, पर लाभ नहीं हुआ। अब भी कुछ खर्च हो तो मैं करने को तैयार हूँ। आप मेरी चिकित्सा कराकर किसी प्रकार इस कष्टसे उद्धार करें।

मैंने हँसते हुए कहा, "आपको मालूम नहीं है, मैं औषधियों पर विश्वास नहीं करता। औषधियोंसे रोग मिटते नहीं, केवल दब जाते हैं। आपने इतने दिनतक औषधियाँ कराई पर रोग नहीं गया। मेरी सलाह मानों और औपधियों के मोहको छोड़ो। मैं आपका इलाज बिना औषधियोंके कराऊँगा।

उन्होंने अत्यन्त कातर भावमें कहा, 'आप जो कुछ भी करायें, मुझे तो अच्छा होनेसे मतलब है।"

यह बात सुनकर मुझे सन्तोष हुआ। मैंने उन्हें दूसरे दिन मारवाड़ी रिलीफ सोसायटीके प्राकृतिक चिकित्सालय विभागके सत्व चिकित्सक श्री मोतीलाल पोद्दार और श्री भरत नारायण पाण्डेयको दिखलाया। उन लोगोंने निरीक्षण किया और उन्हें एक महीने तक प्राकृतिक चिकित्साके अप्रवेशित विभागमें चिकित्सा करानेकी सलाह दी।

काशीनाथ जीकी प्रबल इच्छा थी कि वह इस कष्टसे मुक्ति पाये। इसलिये वह नियमित समयपर आते और अपना इलाज कराते इलाज कराते समय मेरी उनसे दो-एक बार मुलाकात हुई तो मैंने हालचाल पूछा। उन्होंने उत्साहपूर्वक बताया कि लाभ हो रहा है।
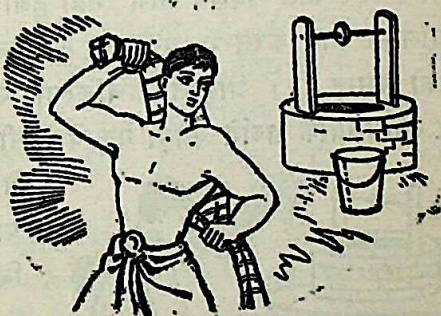
स्नानके बाद तौलियासे घर्षण

सवा महीने यानी पाँच सप्ताहके इलाजसे उनका गठिया का सारा दर्द चला गया। उनकी आयु उस समय ५० वर्ष थी। अपने साथियोंसे बात करते हैं तो कहते हैं कि मेरा सारा रोग भाग गया। मुझे मालूम नहीं था कि बिना औषधिके भी केवल पेटपर गर्म-ठंडा सेंक करने, स्टीम बाथ देने, घर्षण करने और पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी देने और भोजन परिवर्तनसे इतना लाभ होता है।

गठिया ठीक हुई

रामप्रसाद अग्रवाल साधारण स्थितिके आदमी हैं। छोटी

उमूमें पिताजी का स्वर्गवास हो गया। माताने पाल-पोसकर बड़ा किया और विवाह भी कर दिया। पर संयोगकी बात बेटेके विवाहके बाद ही रामप्रसाद की माँको गठिया की बीमारी हो गयी।

अब रामप्रसादने अपनी माताको बीमारीसे छुटकारा दिलानेके लिये चिकित्सकों की सलाहसे दवाइयाँ और इन्जेक्शन आदि दिलाये और अपनी सीमित शक्तिके अनुसार खर्चा भी किया। पर कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। संयोगसे वे जिस कार्यालयमें कार्य करते थे, वहीं एक व्यक्तिने प्राकृतिक चिकित्साकी सलाह दी। प्राकृतिक चिकित्सा उनके लिए नई थी और औषधियोंके खर्चसे घबड़ा गए थे इसीलिये एक दिन मुझ से मिलने आये और प्राकृतिक चिकित्सा विभागमें निःशुल्क चिकित्साकी माँग रखी। मैंने सारी बातें सुनकर उनकी माताजीको भर्तीकरवा दिया। चिकित्सा आरम्भ हो गयी।
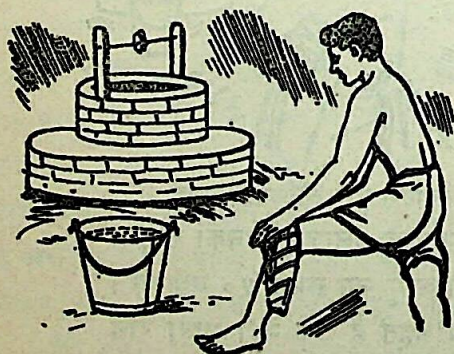
नीचेका हिस्सा रगड़कर साफ करना

उनकी माताजी भी बिना औषधिकी चिकित्सासे घबड़ाती थी, १५ दिनोंमें जो लाभ हुआ, उसे देखकर लगभग तीन महीनों तक और चिकित्सा कराई और ९० प्रतिशत ठीक हो गई।

मैं जब उनसे मिला तो उन्होंने कहा, "मैं बहुत कुछ ठीक हो गई हूँ। थोड़ी बहुत जो कसर है वह बुढ़ापेकी वजह

से है। जब मैंने उनकी उम्र पूछी तो उन्होंने ५० वर्ष बताई। मैंने उनसे कहा, ५० वर्षकी उम्रमें आदमी बूढ़ा नहीं होता। विदेशोंमें तो लोग अपनेको ८० और ९० की अवस्था तक जवान समझते हैं। मेरी माताजी की आयु ८९ वर्षकी है, सारा काम स्वयं करती हैं और जब उन्हें लकड़ी लेकर चलनेको कहा जाता है, तो कहती हैं, क्या मैं बूढ़ी हूं जो लकड़ी लेकर चलूं।

आप यहाँसे जाकर अपना खान-पान बदलें नहीं। जैसे भोजनसे आपको स्वास्थ्य मिला है, वही चलावें। अचार, पापड़, मैदा, चीनी आदि बिल्कुल न खायें। उन्होंने गम्भी-रतापूर्वक कहा, "मुझमें आत्मबल है, मैं अपनी जीभ पर नियंत्रण रखूंगी। मुझे पहले ही मालूम होता तो मैं इन चीजों को छूती ही नहीं। खैर, अब मुझे मालूम हो गया है तो अब इन चीजोंको नहीं खाऊंगी और स्वास्थ्य देनेवाला भोजन ही करूंगी।"

आठ, सोलह, बत्तीस

मेरे एक मित्र हैं जिनकी आयु लगभग ६० वर्ष की हो गयी है, स्वास्थ्य पर बहुत ध्यान देते हैं। उनका स्वास्थ्य है भी अनुकरणीय। एक दिन मैं उनसे मिलने गया। उनके सोने वाले कमरे पीछे लिखा था, "सीधे आठ, दाहिनेके दरवाजे के सोलह, बायेंबत्तीस" अच्छी स्थिति के व्यक्ति हैं। मैंने हंसते हुए

सोनेका सही तरीका

पूछा, क्या तिलस्मी उपन्यासों की तरह आपने भी इनकम टैक्स वालों से बचनेके जहाँ छिपा गड्डियाँ लिए नोटोंकी रखी है वहांका निशान यहां लिख रखा है।" वे कहने लगे, "दरवाजे पर लगे इन वाक्योंको देखकर आप ही की तरह दूसरे लोगभी ऐसा प्रश्न करते हैं। दरअसल ये वाक्य मेरेखजाने के ही तिलस्मी शब्द हैं, पर नोटोंके स्थानको बतानेके बजाय ये स्वास्थ्यको ठीक रखनेका उपाय बताते है। पूरी बात मेरी समझमें नहीं आयी।

वे कहने लगे, "भोजनके उपरान्त यदि मनुष्य सीधे होकर ८ सांस लें, फिर दाहिने करवट लेकर १६ सांस ले, और अन्तमें बायें करवट लेकर ३२ सांस ले, तो किया हुआ भोजन पेटमें यथा स्थान पहुंच जाता है और वायु (गैस) मुंह द्वारा डकारके रूपमें या गुदा द्वारा अपान वायु के रूपमें उसी समय निकल जाती है। यह छोटा-सा नुस्खा एक वयोवृद्ध विद्वान प्राकृतिक चिकित्सकने अनुभवके आधार पर लगभग ७-८ वर्षपहले मुझे बताया था जिसे मैं भोजनके उपरान्त नित्य उपयोग में लाताहूँ। बायें-दायें
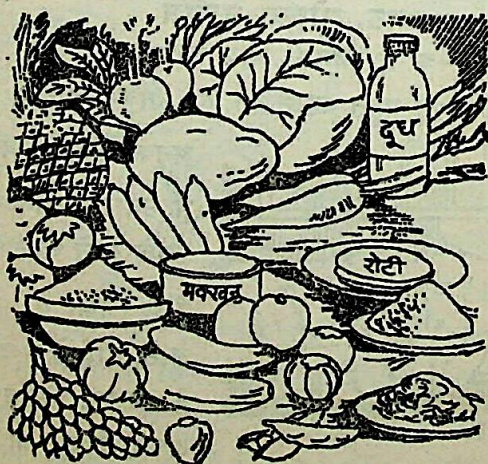
जीवन-शक्ति दाता आहार

की संख्यामें या उसे करनेमें भूल न हो इसलिए दरवाजे पर लिख दिया है।

मेरे स्वास्थ्यका राज ही, जीवन शक्तिदाता आहार, प्रातः भ्रमण एवं आठ, सोलह और बत्तीस है।

जलेका इलाज पानी

प्राकृतिक चिकित्साका भक्त होनेसे पहले जलनेपर स्याही, पिसा हुआ कच्चा आलू तथा अन्य कितनी ही दवाइयोंके प्रयोग मैंने सुन रखे थे और साथ ही यह भी सुन रखा था कि जलनेपर पानी पड़नेसे फफोले पड़ जाते हैं पर प्राकृतिक चिकित्साका साहित्य पढ़नेसे मालूम हुआ कि जलनेपर जले हुए स्थान को तुरन्त ठंढ़े पानीमें डुबा देना चाहिए और इतनी देर तक उसे डुबोये रखना चाहिए कि जलन शान्त हो जाये। यदि शारीरिक गर्मीसे पानी गरम हो जाये और उसके कारण रोगी को पुनः जलन मालूम देने लगे तो उस गरम पानीको ठंढ़े पानीसे बदल देना चाहिए या उसमें बरफ डाल देना चाहिए। जले हुए स्थानपर कपड़ा हो और वह ढीलाढाला हो तो उसे उतार देना चाहिए। और यदि कसा हो तो उसे फाड़कर हटा देना चाहिए। शरीर रक्षाके लिए कपड़ेका मोह नहीं करना चाहिए। आगसे शरीर या उसका कोई भाग जितना अधिक जले उतने ही समय तक
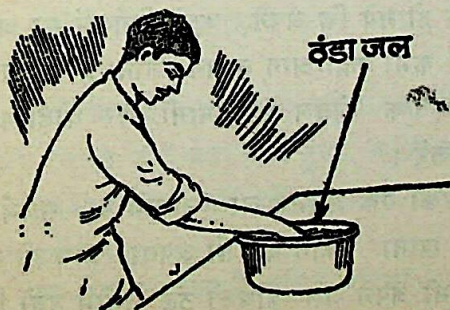
उसे पानीमें रखना चाहिए। यह बात मुझे आरम्भमें बड़ी

अटपटी ओर नयी सी लगी, परन्तु जव अपने परिवारमें तथा अन्य जगहोंमें मौका मिलने परइस प्रयोगको आजमाया तो प्रयोग को सोलहो आने सही पाया। अर्थात जलने वालेको इस प्रयोग से बहुत शीघ्र आराम मिला और शरीरपर जलनेका निशान भी न पड़ा।

१९५३ में जब मैं यूरोप गया, उस समय एडिनबराके श्री थामसनसे मेरी बातचीत हुई। उन्होंने इस सम्बन्धमें अपना एक अनुभव सुनाया।

एक बार श्री थामसन अपने एक मित्रके साथ, जो फायर ब्रिगेडके अफसर थे, एक पिकनिकमें गये हुए थे। वहां मित्र महोदयका हाथ जल गया। मित्र दवा-दारूके घोर पक्षपाती थे। लगे दवा ढ़ूढ़ने। मगर जंगलमें दवा कहां ? तब डा० थामसनने कहा अपने हाथ ठंढ़े जलमें डुबा दीजिए। पहले तो उन्होंने इस बातका मजाक उड़ाया, मगर जब कोई दवा न मिली तो डा० थामसनका कहना मानकर अपना जला हाथ जलमें डाल दिया और कुछ देर उसीमें रखे रहे। ऐसा करने से उन्हें आश्चर्यजनक लाभ हुआ। फिर तो वह इस चिकित्सा के इतने बड़े भक्त हो गये कि अपने फायरब्रिगेडमें यह आदेश दे दिया कि जब कभी कहीं आग बुझाने जाना हो तो प्रत्येक व्यक्ति अपने साथ एक बोतल ठंढा पानी और थोड़ा कपड़ा अवश्य ले जाया करें।

इसी प्रकारका एक अनुभव ला एंजल्सके डा० सुलमैनका है। वे एक दिन खाना पकाने बैठे तो अपना हाथ ही जला लिया। उन्होंने भी अपने जले हाथको ठंढ़े पानीमें डुबो दिया जिससे उन्हें बड़ा लाभ हुआ। तबसे लगभग २०० जले हुए

लोगोंपर उन्होंने इस प्रयोगको आजमाया और शतप्रतिशत सफलता मिली। डा० सुलमैन यह जानते थे कि अमेरिकाके सीमान्त प्रदेशोंमें और आइसलैण्डमें यह प्रयोग सफलता पूर्वक किया जाता है।

इस प्रयोगके चमत्कारको तो अमेरिकाके डा० ओफेगैलनने और भी स्पष्ट रूपसे देखा। एक लड़कीका पूरा हाथ गल गया था। उसका हाथ ठंढे पानीसे भरी एक बाल्टीमें डाला गया। जले हाथका जितना अंश पानीमें रहा, वह तो जल्दी अच्छा हो गया और उसमें निशान भी कहीं नहीं था, परन्तु जो अंश बाहर था उसमें जलनेके निशान पड़ गये थे।

कब्ज में प्राकृतिक चिकित्सा

गत बीस वर्षोंमें मेरे परिवारके सदस्योंको कितनी ही छोटी-बड़ी बीमारियाँ हुई और वे सब प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा दूर हुईं, लेकिन इस बार मेरे पिताजी अचानक अस्वस्थ हो गये अर्थात उन्हें कब्ज रहने लगा और भूख नहीं लगती थी। एनिमा देनेपर भी पेट साफ नहीं होता था। इससे घरके लोगों का चिन्तित होना स्वाभाविक था। पिताजीके नित्य कर्म यानी मन्दिर जाने तथा सोसाइटी जाने आदिमें बाधा उपस्थित हो गई।

दसवें दिन एनिमाके साथ ग्लीसरिन भी दिया। कई गाठें निकलीं, जिससे उन्हें बड़ा कष्ट हुआ, काफी कमजोरी आयी। उठने बैठनेकी शक्ति नहीं रही। विस्तरपर ही टट्टी—पेशाब करना पड़ता था।

एक दिन उन्हें इतनी अधिक टट्टियां आयी कि घरवालों को संदेह होने लगा कि इस बुढ़ापेमें इस तरहके दस्त उनके

लिये घातक न सिद्ध हों। पिताजीकी इस बीमारीका समाचार जब मित्रों और रिश्तेदारोंको मिला, तो वे लोग भी सहानुभूति प्रदर्शित करनेके लिये आने लगे और पिताजी की इस गिरी हुई अवस्थाको देखकर अपनी निराशा प्रकट करने लगे। यहां तक कि एक मित्रने तो दुशाला तक मंगा लिया। अब तक
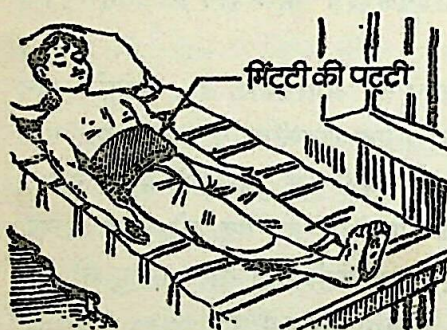
सोसाइटीके सत्व चिकित्सक मोतीलाल पोद्दारकी चिकित्सा चल रही थी। पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी बराबर चलती रही। फिर उरुलीकांचनके सत्व चिकित्सक श्री शरण प्रसादजी ने पिताजी को देखा। उन्होंने कहा उम्र तो पिताजी की काफी है, परन्तु इन दस्तोंको खतरे की घंटी नहीं समझना चाहिये। इस क्रियाको तो शरीरका विकार निकलना ही मानना चाहिये।

पिताजी भी इतने वर्षों तक प्राकृतिक चिकित्साके चमत्कार देखनेके कारण दृढ़ थे। अतः उन्होंने मुझसे कहा, मैं जीऊँ या मरूँ, पर मेरी केवल प्राकृतिक चिकित्सा ही होनी चाहिये। उनके इन शब्दोंसे मुझे थोड़ा बल मिला। दूसरी तरफ मित्रों और रिस्तेदारोंकी राय डाक्टरको बुलाकर दिखाने की थी। वे कहते थे आप डाक्टरी चिकित्सा चाहे करायें, या न करायें पर पिताजीको दिखाकर उनकी राय लेनेमें क्या हर्ज है। लेकिन यह राय मुझे नहीं जंची, और मैंने उसका विरोध किया। पिताजी को रोजाना पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी देता। कई

दिनों तक मट्ठेपर रखा। फिर उन्हें पालक, पपीता, सेव आदि दिया गया। उसके बाद हाथ-कुटा चावल, किशमिश, और दलिया आदि भी देना शुरू किया। धीरे-धीरे उनकी अवस्थामें सुधार होने लगा और महीने बीस दिनमें वह पूर्ण स्वस्थ भी हो गये।

इसपर कुछ मित्र, कहने लगे, धर्मचन्दजी, आपने अपने पिताजीको मारनेकी तो बहुत कोशिशकी, उनका भोजन बन्द कर दिया, प्राकृतिक चिकित्साके नाम पर अन्य चिकित्सकोंको उन्हें दिखाना बन्दकर कर दिया, पर उनकी आयु थी इसलिये वह वच गये। इसके उत्तरमें
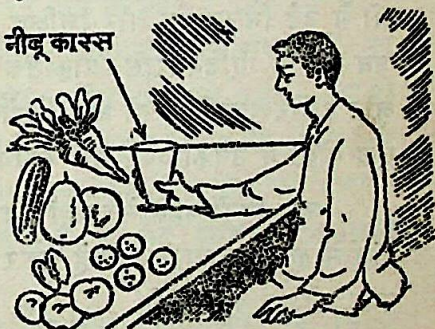
मैं हंसकर उनसे कहता, आपलोग अपने रोगी रिश्तेदारोंको बचानेके लिये रुपया खर्च करते है, उन्हें कड़वी दवाइयां पिलाते है, तीखी सूइयां लगवाते है और नफे में वे मर जाते है। और मैं अपने परिवारके लोगोंको मारनेके प्रयत्नमें उन्हें नीवू एवं फल-रस पिलाता हूं, कड़वी दवाइयोंसे बचाता हूं और इस तरह उनका जीवन भी बचा लेता हूं। फिर भी मैं इन सबको अपनी करामात नही मानता, बल्कि प्राकृतिक चिकित्साका एक साधारण सा चमत्कार मानता हूं।

दांतोंकी प्राकृतिक चिकित्सा

मेरे मकानमें डाक्टर नियोगी नामके एक सुप्रसिद्ध दन्त

चिकित्सक रहते हैं। कलकत्तेमें उनकी काफी प्रसिद्धि है। शहरके धनिक, मिल मालिक, व्यापारी, विदेशी दूतावास तथा मिनिस्टर आदिकी गाड़ियां प्रायः इनके चिकित्सालयके सामने खड़ी ही रहती हैं। अपने हुनरमें चूंकि यह सिद्धहस्त हैं, इसलिए फीस भी बड़ी लम्बी लेते हैं। सौभाग्यसे कहिए या दुर्भाग्यसे हमारे परिवारमें पिताजी और माताजीके अलावा और किसीको भी इनकी सेवाकी आवश्यकता नहीं पड़ी। वैसे भी ये बड़े मिलनसार और शिक्षित व्यक्ति है। सन् १९५४ में जब सिधवा एडिनबरासे प्राकृतिक चिकित्सा सीखकर आये और हमारे यहां ठहरे तो श्री नियोगीने दन्त चिकित्सकों की एक गोष्ठीमें उनका व्याख्यान कराया।

कुछ दिनों पहले मेरे यहां एक रिश्तेदार आये। उनके दांतोंमें कुछ दर्द था। मैं उन्हें लेकर जब श्री नियोगीजीके पास गया, तो वह कहने लगे कि दांतमें जो थोड़ा बहुत दर्द होता है, उसका कारण सिर्फ यह है कि लोग भोजनके बाद मुंह साफ नहीं करते और सुबहको भोजन करते हैं तथा मसूढ़ोंकी मालिश नहीं करते। ब्रशसे केवल सामनेके दांत तो साफ कर लेते हैं पर यदि महीन नमक और कड़वा तेल मिलाकर ब्रशसे मंजन करनेके बाद मसूढ़ोंको उंगलीसे मला जाय तो
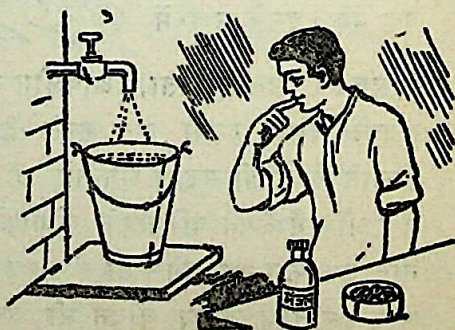
मिट्टी से दांत का मंजन

दांत मजबूत होते है। इसके अलावा भोजनमें गाजरका प्रयोग दाँतोंके लिए लाभप्रद है। चीनी, चाय, काफी, आइसक्रीम आदिका उपयोग बन्दकर देना चाहिए। ये चीजें दांतोंके दुश्मन हैं।

इस कथनके वाद उन्होंने मुझसे कहा, यदि आप कहेंगे तो मैं ३२ रुपये फीस लेकर वड़े आरामसे इनका दाँत उखाड़ दूंगा। पर यह कार्य उनके स्वास्थ्यके लिए अच्छा नहीं रहेगा। धीरे-धीरे एकके बाद एक, कई दांत निकलवाने पड़ेंगे या थोड़ी देरके लिए दर्द मिटानेकी कीमती दवा भी लिख सकता हूँ, पर उसका असर स्थायी नहीं होगा। मैंने हंसते हुये कहा—आप तो मुझे देखकर एक प्राकृतिक चिकित्सककी भांति दांत की चिकित्सा बताने लगे। अपनी दवाओंको भूल ही गये। प्राकृतिक चिकित्सा का मैं प्रेमी हूं पर मेरे मित्रको दवाओंसे बिल्कुल परहेज नहीं है।

मेरी बात सुनकर उन्होंने कहा, "आप प्राकृतिक चिकित्साके भक्त हैं, इसीलिये तो सालमें कुछ नहीं देते, केवल दूर ही से हाथ जोड़ लेते हैं। आपके मित्रको असली दन्त-चिकित्सा बतायी है, इसलिए कि आप इनके साथ आये हैं। ये अकेले आते तो यह चिकित्सा नहीं बताता। क्योंकि यह मेरे जीवनका अनुभव है कि यदि किसी रोगीको मैं कम कीमतका देशी नुस्खा बताता हूँ तो वह समझता है कि मुझे दवाओंका ज्ञान ही नहीं है और मैं बुद्धू हूँ। इसलिए अपनी व्यापारिक प्रतिष्ठा रखनेके लिए इच्छा न रहते हुए भी, लोगोंको कीमती औषधियां बतानी पड़ती हैं।"

मेरे मित्रने डाक्टर नियोगीके बताये हुए तरीकेसे अपने

भोजनमें गाजरका उपयोग आरम्भ किया और मिट्टीका मंजन और अंगुलीसे मसूढ़ोंको मलना शुरूकर दिया, परिणामस्वरूप कुछ ही दिनोंमें उनके दांतका दर्द जाता रहा और जहाँ उन्हें पानी पीने तकमें कष्टका अनुभव होता था वहां वे अब गन्ना चूस लेते हैं।

होशमें रहता तो यह इलाज न कराता

१५वीं विश्व-शाकाहारी-कांग्रेसका अधिवेशन १९५८में कलकत्तेमें हुआ। उसमें विदेशोंके और अपने देशके बहुतसे लोगोंने भाग लिया। कई दिन बैठकें हुई और पार्टियाँ भी। उपस्थित लोगोंमें विदेशमें जाकर पत्रकारिताकी शिक्षा लेनेवाले भी एक सज्जन थे। बैठकोंके आनन्दके साथ-साथ भोजनका भी उन्होंने आनन्द लिया। बैठकोंकी समाप्तिपर जब सब लोग चले गये और मैंने भी अपने कार्यसे छुट्टी पायी तो अचानक एक दिन एक मित्रका, जिनके यहाँ अतिथियोंको ठहराया गया था, टेलीफोन आया। बोले, "सभी अतिथि यहाँसे चले गये हैं परन्तु एक व्यक्तिको खूनके दस्त लग रहे हैं और वह बेहोश है, कोई व्यवस्था कीजिये। हमें स्थानकी आवश्यकता है, हमारे यहाँ दूसरे अतिथि आने वाले हैं।"

मैं असमंजसमें पड़ा। पर दूसरे क्षण अपने बड़े लड़केको गाड़ी लेकर भेजा कि उस बीमार व्यक्तिको वहाँसे लेकर मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटीके प्रा० चि० विभागमें भरती करा दिया जाय। उसे ३०-४० खूनकी टट्टियाँ रोज लग रही थीं। चिकित्सक हैरान थे, क्या किया जाय ?

मैंने चिकित्सककी समझाकर कहा कि मरना-जीना तो भगवानके अख्त्यारकी बात है पर सेवा करना हमारे हाथ है।
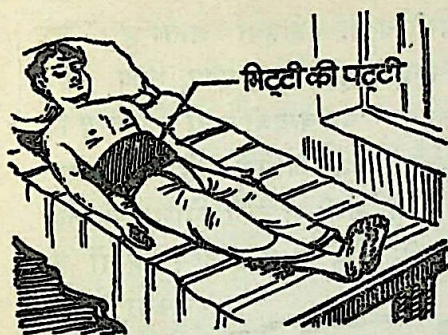
मिट्टीकी पट्टी और एनीमा देनेसे दूसरे दस्त कुछ कम हुए तथा तीसरे दिन बिल्कुल बन्द हो गये। चौथे दिन जब मैं उनसे मिला तो वह कहने लगे, मैंने प्राकृतिक चिकित्साके सम्बन्धमें सुना तो था, पर मेरा विश्वास उसपर नहीं जमा था। यदि होशमें होता तो यह चिकित्सा न कराता। आपने यह चिकित्सा करके मेरे दिमागपर प्राकृतिक चिकित्साकी छाप बैठा दी है। अब मैं इसका ढिंढोरा पीटता फिरूँगा।

वह बन्धु सात दिनमें स्वस्थ होकर अपने गाँव चले गये। मैंने उनसे हँसते हुए कहा, स्वास्थ्यकी दृष्टिसे आपका बेहोश होना ही लाभप्रद रहा।

"लखपतियोंकी तरह भोजन करता हूँ"

कलकत्ताका जैनियोंका कार्तिक महोत्सव विख्यात है। इस समय श्वेताम्बर और दिगम्बर सम्प्रदायोंके जुलुस निकलते हैं। इन जैन समाजके साथ-साथ दूसरे समाजके लोग भी शामिल होते हैं। यह जुलूस लगभग एक मील लम्बा होता है। कहते हैं कि ये जुलूस लगभग एक सौ वर्षसे निकलते हैं।

मैं भी हर साल जुलूसमें शामिल होता हूँ। एक वर्षकी बात है कई नये पुराने लोगोंसे मुलाकातें हुई। एक मित्र मिले। उनका स्वास्थ्य काफी अच्छा था। मैंने उनके स्वास्थ्यके बारेमें

पूछा। कहने लगे, "आपकी बताई हुई हवा खाता हूँ।" मेरे साथ एक और मित्र थे। उन्होंने हंसते हुए पूछा, "क्या मत–लब ?" पहले मित्र ने कहा, "धर्मचन्दजीं कहा करते हैं कि मनुष्य बिना हवाके तीन चार मिनटसे अधिक नहीं जी सकता। ऐसी उपयोगी चीजको मैं पहले कभी खानेकी कोशिश ही नहीं करता था और जिस अन्नको खाये बिना मनुष्य महीनों जी सकता है, उसे ही दिनमें तीन चारबार खाता था, जिससे बीमार पड़ा करता था। मैं तो आजकल सुबह ५ बजे ही किले के मैदानमें हवा खाने चल। जाता हूं, तीन चार मील कस कर घूमता हूँ और केवल दो बार भोजन करता हूँ। तली हुई चीजों की वनस्पति साग-सब्जियों और फलोंका इस्तेमाल अधिक करता हूं। इसीका परिणाम है कि आज मैं कई महीनों से बिल्कुल स्वस्थ हूं और मस्त हूं।
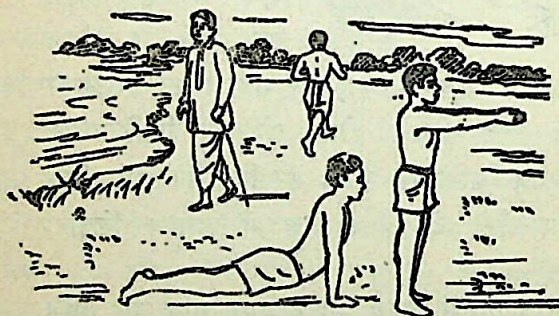
प्रातः भ्रमण एवं व्यायाम

चलते–चलते ग्रे स्ट्रीटके चौराहेपर जुलूस पहुंचा, जहां वह कुछ देर रुका। एक मित्र, जो दो–ढाई सौ रुपये मासिक पर किसी आफिसमें कार्य करते हैं, मिले। पूछनेपर कहने लगे, आपके बताये अनुसार आजकल लखपतियोंका भोजन करता हूं और खर्च केवल ७० रु. मासिक आता है। जबसे यह

भोजन मैंने आरम्भ किया है, बीमार नहीं पड़ा हूं ।

एक बासे वालेसे प्रबन्ध किया है। केवल एक बार भोजन करता हूं। वह एक बारका एक रुपया लेता है। भोजन में उससे पापड़ नहीं लेता और फुलकों पर घी (डालडा) भी नहीं चुपड़वाता। इससे वह बड़ा प्रसन्न रहता है और अन्य लोगों की बनिस्पत मेरी खातिर अधिक करता है। कहने पर बिना मिर्चका साग भी मेरे लिए रख देता है। इस प्रकार सुबहका भोजन ८॥–९ बजे करके मैं दफ्तर चला जाता हूं। टिफिनके समय संतरा, केला या खीरा जो भी मिलता है, दो आने या चार आनेका लेकर खा लेता हूं। संध्या को दफ्तरसे लौटकर कुछ विश्राम करनेके बाद सात–आठ बजे आध सेर दूध, दो केले, चार-पाँच खजूर तथा थोड़ा नारियल लेता हूं। इस भोजनमें खर्च एक रुपयेसे अधिक नहीं होता। खजूरसे खून बढ़ता है, नारियलसे चिकनाई मिलती है, और सुबह पेट साफ हो जाता है। इस तरह मेरे भोजनमें अन्न, फल और दूध सभी चीजें आ जाती हैं। ऐसा भोजन आज-कल लखप–तियोंका भोजन माना जाता है। भोजनकी यह मात्रा आफिस में काम करने वाले एक
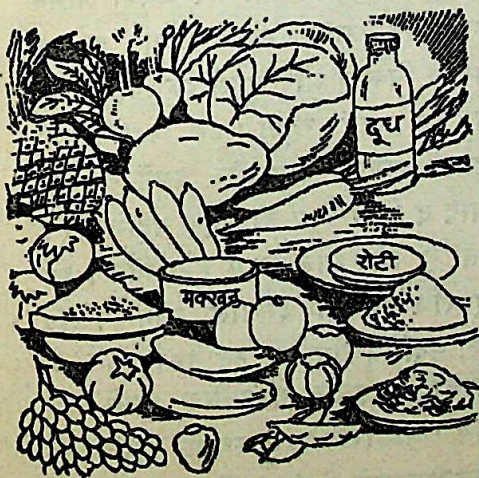
स्वास्थ्यकर भोजन

व्यक्तिके लिए पर्याप्त है। स्वाद या पुराने संस्कारके अनु-सार इससे अधिक खानेवाले व्यक्ति, जैसा कि कहावत है, अपने शरीरके लिए न खाकर चिकित्सकोंके लिए खाते हैं। यानी अधिक खानेसे तज्जनित विजातीय द्रव्य जो शरीरमें इकट्ठा होता रहता है, को बाहर निकालनेके लिए बीमारीका आगमन होता है और स्वादका मूल्य चिकित्सकोंकी फीस में चुकाना पड़ता है।

संध्याके लगभग ४ बजे थे। जुलूस बेलगछिया पहुंचा। सब लोगोंने भोजन पर धांवा बोल दिया। मैं वहां मन्दिरमें दर्शन करके एक बेंच पर जमकर बैठ गया और मिलने वाले बन्धुओंसे बातें करने लगा।

एक मित्रने कहा, आपने अपने एक भाषणमें कहा था कि मनुष्य अपने शरीरके लिए रोज कम से कम एक घंटा दें।

चाहे उतने समयमें वह घूमें, व्यायाम करें अथवा आसन प्राणायाम करें, उसका शरीर बराबर स्वस्थ रहेगा। पर वह बहानाबाजी करके समय न निकाले और समझे कि वह होशि-यारी कर रहा है, तो वह घाटेमें रहेगा। इस कामके लिए एक घंटेके हिसाबसे हिसाब लगाया जाय और इसमें रविवार और अन्य छुट्टियोंको बाद दे दिया जाय तो एक महीनेमें २४ घंटे यानी एक दिन होता है, और साल भरमें १२ दिन। इस प्रकार व्यायामके लिए रोज समय न देनेवाले लोगोको यदि देखा जाये तो वे बुखार, सर्दी-जुकाम, सर दर्द या किसी अन्य रोगसे सालमें इतने दिनों या इससे भी अधिक दिनों तक पीड़ित रहते पाये जायेंगे। बीमारीकी अवस्थामें कामका तो हर्ज होता ही है उसके निराकरणके लिए औषधियोंमें रुपये कम

खर्च नहीं होते। घरवालोंको परेशानी और चिन्ता जो रहती है सो अलग, और नफेमें सुइयां और कड़वी-कड़वी दवाइयां गलेके नीचे उतारनी पड़ती हैं। इससे तो यही अच्छा है कि शरीरका कर्ज एक घंटेके हिसाबसे रोजका रोज चुका दिया जाय। आपकी ये बातें मुझे बड़ी अच्छी लगी थी। अतः मैं आजकल अपना यह कर्ज रोजका रोज चुका दिया करता हूं और मजेमें हूं।

खूब गुजरेगी : मिल बैठेंगे जब दो दीवाने

इस बार एक मित्रके लड़केकी शादीमें बाँकुड़ा गया। लौटते समय एक प्राकृतिक चिकित्सा प्रेमी मित्रसे बातें होने लगी। मित्रकी उम्र पचाससे अधिक है। पर वे लगते हैं चालीससे कम ही के। जो भी नया आदमी उनसे मिलता है वह अपनी उम्र उसे चालीस ही बताते हैं। खान-पानमें उन्होंने काफी नियन्त्रण कर रखा है। चौबीस घंटोंमें आध छटाँक से लेकर एक छटाँक तक अन्न रोज खाते हैं। कहा करते हैं अन्न तो मैंने गरीबोंके लिए छोड़ दिया है और उन्हींके आशीर्वादसे आज मैं स्वस्थ हूँ। मेरी ही तरह यदि दूसरे लोग भी अन्नका उपयोग कम करें तो वे स्वयं स्वस्थ रहनेके साथ-साथ भारत की अन्न समस्याको हल करनेमें भी सहायक होंगे। और तब हो सकता है भारतको विदेशोंसे अन्न मंगाना ही न पड़े।

वह नित्य प्रातः भ्रमण एवं अन्य व्यायाम भी करते हैं। चाहे वह रेलमें यात्रा करते हों या हवाई जहाजमें। उनका यह क्रम कभी नहीं टूटता। समय निकालकर कुछ व्यायाम कर ही लेते हैं। लोगोंके पूछनेपर कहते हैं आजके सभ्य समाजके लोगों

को यदि खुलेआम सिगरेट शराब आदि पीनेमें लज्जा नहीं आती तो मैं अच्छा काम करनेमें लज्जा क्यों करूँ ? मेरा शरीर भी कोई आधुनिक सीकिया पहलवानकी तरह नहीं है, सीना भी चिकेन चेस्ट नहीं हो कि व्यायाम करते समय मेरे मनमें हीन भावनाकी उत्पत्ति हो।

आगे उन्होंने बताया, मुझे सबसे अधिक आश्चर्य तो इस बातपर होता है कि कुछ मित्र जो मेरे रहन-सहन, खान-पान की आलोचना करते हैं वे ऐसे व्यक्ति हैं जो औषधियोंपर जीते हैं। और जिन्हें कोई न कोई बीमारी लगी रहती है। कुछ तो ऐसे भी हैं जो वस्तुतः मुझसे उम्रमें कम हैं किन्तु मुझसे उम्र में अधिक वयस्क दिखलाई पड़ते हैं। इसलिये मैं उनकी आलोच-नाओंको एक कानसे सुनता हूँ और दूसरेसे निकाल देता हूँ। और अपने जीवनक्रमपर, जिससे मुझे लाभ है, चलता रहता हूं, फलतः बहुत दिनोंसे मैं कभी बीमार पड़ा ही नहीं। मैं सुबह व्यायाम करनेके बाद कच्चा दूध बिना चीनी मिला, तीन-चार केले, चार खजूर और कुछ नारियलके टुकड़े लेता हूँ। खजूरके साथ नारियल खानेमें वह बड़ा स्वादिष्ट लगता है। नारियल द्वारा शरीरको पूरी चिकनाई मिल जाती है और पेटको साफ भी खूब करता है। खजूर खून बढ़ाता है। केले और दूधका मेल बढ़िया होनेके कारण वह पूरा-पूरा संतुलित भोजन बन जाता है। दोपहरको आधी छटांकसे एक छटांक अन्न रोटी तथा चावल आदिके रूपमें लेता हूँ। साग तो लेता ही हूँ कच्ची तरकारियाँ भी खाता हूँ जिनमें मुख्य तःउस खास ऋतु की ही

तरकारियाँ होती हैं। जैसे गाजर, गोभी, टमाटर, खीरा आदि, इसके अलावा गन्नेके मौसममें गन्ना चूसता हूँ। कच्ची तरकारी खानेसे और गन्ना चूसनेसे दांत बहुत मजबूत बने रहते हैं।
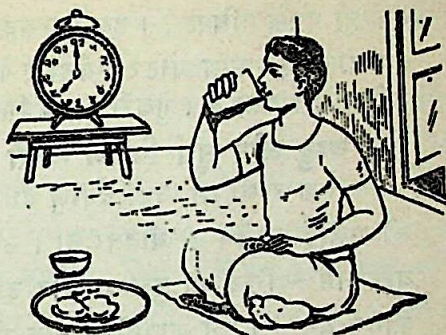
प्रात: नाश्ता

संध्याको दूध और मौसमके फल जैसे सन्तरा, पपीता, आम, लीची, सफेदा, बेल, नासपाती, खरबूजा तथा सूखे मेवे आदिमें से कोई एक या दो चीजें लेता हूँ। मैंने अब तक जो स्वास्थ्य सम्बन्धी साहित्य पढ़ा है उससे मालूम हुआ है कि चालीस से अधिक उम्र वाले व्यक्तियोंको स्वस्थ रहनेके लिये संध्या समय दूध-फलका हल्का भोजन करना चाहिये। मेरा कहना मानकर मेरे कई मित्रोंने भी अपना संध्याका भोजन साधारण प्रचलित भोजनकी जगह दूध, फल ही कर लिया है इससे उन्हें काफी लाभ हुआ है।
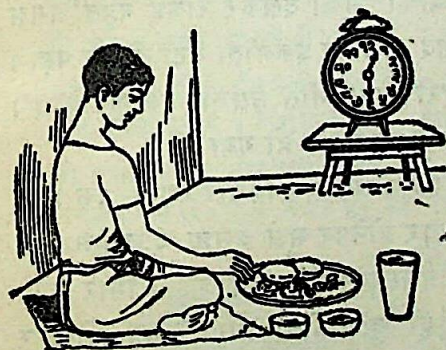
दोपहरका भोजन

मैंने उनकी सारी बातें सुनी तो कहा, आप और मैं दोनों

एक ही पथके पथिक है। इस पर वह हंसकर बोले, इसीसे तो हम दोनों एक साथ मोटरमें बैठकर कलकत्ते चल रहे हैं।किसी कविने सच कहा है। गुजरेगी जब मिल बैठेगें दीवाने दो।

वायु और सूर्य किरण सबसे अच्छी औषधियां

एक राजा था, बड़ा दयालु था। उसका सारा समय प्रजा की भलाई करनेमें ही बीतता था। उसने अपने राज्यके सभी बुद्धिमान व्यक्तियोंको बुलाया और उनकी सलाहसे अच्छे-अच्छे कानून बनाये। उन कानूनोंका ठीक-ठीक पालन करनेकी उसने भरपूर चेष्टाकी, ताकि उसकी प्रजाको कोई कष्ट न हो और सुखी रहे।

अच्छी व्यवस्था से राजा के राज्यमें खेती और व्यापार की खूब प्रगति हुई। प्रजाको सुखी देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ। कुछ ही दिनों बाद राजाका इकलौता बेटा बीमार पड़ा। राज्यके चिकित्सकने पूरी सावधानीसे उसका इलाज किया। फलतः कुछ ही दिनोंमें लड़का स्वस्थ हो गया।

इस घटनासे राजाके मनमें यह विचार आया कि जिस तरह अपने लड़के के बीमार होनेपर मुझे असह्य दुःख हुआ था, उसी प्रकार मेरी प्यारी प्रजाके लड़के–बच्चे जब बीमार होते होंगे तो उन्हें भी अवश्य ही दुःख होता होगा। यह सोचकर उसने अपने राज्यके सभी चिकित्सकों को बुलाया और उनसे कहा कि कोई ऐसा उपाय बताओ जिससे मेरे राज्यसे रोग दूर हो जाये। अर्थात् आजसे मेरे राज्यमें कोई बीमार ही न पड़े।

सभी चिकित्सकों ने अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार राज्य से सभी बीमारियोंको दूर करनेके उपाय बताये। लेकिन एक बूढ़ा चिकित्सक चुप रहा। वह बहुत अनुभवी था। राजाने उसे

चुप देखकर पूछा, आप हमारे राज्यके सबसे अनुभवी चिकित्सक है, लेकिन आपने कोई उपाय नहीं बताया।

चिकित्सक ने गंभीर स्वरमें कहा, महाराज ! जो सबसे अच्छी दवा है, उसका आप प्रबन्ध नहीं कर सकते और न आप अपने अधिकारियों द्वारा ही सबको बंटवा सकते है। चिकित्सककी यह बात सुनकर राजाको चोट पहुँची। उसने सोचा, भला ऐसी क्या चीज है, जिसका मैं इन्तजाम नहीं कर सकता। इतना बड़ा मेरा राज्य, इतने मेरे अधिकारी। और इतनी मेरे पास धन-दौलत। जिस चीजका चाहूँ, निश्चित रूप से इन्तजाम कर सकता हूं।

राजाने चिकित्सकसे कहा, आप उस दवाका नाम तो बतायें। दुनियामें चाहे जहाँ भी वह दवा मिले और चाहे कितनी ही मंहगी क्यों न हो मैं उसका प्रबन्ध अवश्य करूंगा। मेरे अधिकारी इतने ईमानदार हैं कि वह दवाका वितरण जनतामें ठीक-ठीक करेंगे। चिकित्सकने कहा महाराज ! उस दवाको न तो संग्रह करके गोदाममें रखा जा सकता है और न वह एक जगहसे दूसरी जगह भेजी ही जा सकनी है।
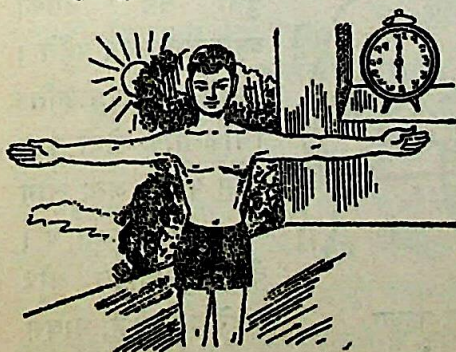
राजा बोला, लेकिन उस दवाका नाम तो बताइये। वृद्ध चिकित्सकने कहा—महाराज ! वह दवा है शुद्ध वायु और सूर्यकी किरणें। इनका उपयोग तो उसी जगह किया जा सकता है जहां ये मिलें।

व्यायाम, धूप एवं हवालेते हुए

इन्हें रुपये पैसे से नहीं खरीदा जा सकता और न कोई इन्हें जनतामें वितरण कर सकता है। इतनी सस्ती चीजें है ये पर यही सारे रोगोंकी दवा है। आप जनताको समझाइये कि वह सूर्य–किरण और शुद्ध वायुका अधिक से अधिक उपयोग करे।

समझाने का ढंग

पिताजी की बीमारीके बाद तीर्थ-यात्राके लिये मैं उन्हें महाबीरजी ले गया था। रास्तेमें जयपुर कई दिनों तक ठहर गया। वहां रामेश्वरजी गर्ग से मालूम हुआ कि प्रभुदयालजी वैद्य एक सर्वोदयी कार्यकर्ता है, प्राकृतिक चिकित्सामें भी रुचि रखते है और अच्छे प्रचारक है। मैंने प्रभुदयालजी का नाम सुना तो था, पर उनसे मिलने का मौका नहीं मिला था। इसलिये रामेश्वरजीसे कह दिया कि वे उनके व्याख्यानकी व्यवस्था कर दें ताकि मैं भी उनसे मिल सकूं।

गर्गजी ने पत्र लिखकर उन्हें बुलाया और प्राकृतिक चिकित्सामें उनके व्याख्यान की व्यवस्था की। मैं, मेरी माता जी, मेरी पत्नी, मेरी पुत्री सब उनका व्याख्यान सुनने पहुँचे। हमारे अलावा प्राकृतिक चिकित्साके रोगी तथा आस पासके अन्य लोग भी वहाँ उपस्थित थे। वैद्यजी सुगठित और छरहरे बदनके है, भाषण के साथ गायन करते हैं और नाचते भी है। आर्य समाजियोंकी
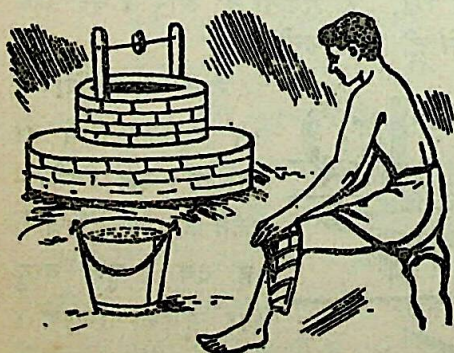
कुयें से पानी निकालकर नहाना

तरह अपने श्रोताओं को हर समय अपनी ओर आकर्षित किये रहते हैं। उन्होंने प्राकृतिक जीवनसे लाभकी बातें बताई, साथ ही बड़े अच्छे ढंगसे यह भी समझाया कि पुराने जमानेमें हमारी माँ-बहनें जो कुएँसे पानी भरती थीं, उनसे उनके किन-किन अंगोंको शक्ति मिलती थी। जो दूध दुहती थीं, उससे किस-किस अंगको शक्ति मिलती थी और आटा पीसते समय कौन कौन से अंग पुष्ट होते थे। ये सारी क्रियाएँ वैद्यजी बड़े अच्छे ढंगसे विना रस्सी, बिना गाय बिना चक्कीके केवल भाव प्रदर्शन एवं अंग संचालन द्वारा ही बताते थे, और कहते थे जो बहनें शहरी जीवन और आधुनिक शिक्षाके कारण इन कार्योंसे घृणा करती हैं, और ये काम नहीं करती है, उन्हें बीमार अवश्य होना पड़ता है और सुइयां लगवानी पड़ती है। श्रोताओं पर इस व्याख्यानका अच्छा प्रभाव पड़ा। औरोंकी बात तो छोड़िये मेरी पत्नी स्वयं इतनी प्रभावित हुई कि उसने नित्य आटा पीसनेका नियम ही वना लिया जिससे उसे इतनी स्फूर्ति मिलती है कि वह दिन भर प्रसन्न रहती है। रातको वड़ी अच्छी नींद आती है और सुबह कब्जकी शिकायत नहीं रहती।

छूतकी बीमारी

मेरे बचपनमें हमारे परिवारमें वैद्यों और डाक्टरोंका बोल बाला था। पिताजी रहन-सहन और कपड़े लत्ते आदि पर विशेष खर्च नहीं करते थे, पर परिवारमें यदि कोई बीमार पड़ जाय तो चिकित्सकोंके लिये थैलीका मुँह खोल देते थे। डाक्टर और वैद्योंकी मोटा मोटी फीसकी परवाह न कर, जहां डाक्टरको दिनमें एक बार बुलाने से काम चल जाता, वहां उसे दिनमें दो-दो, बार तीन-तीन बार बुला लेते और कभी—कभी

तो दो–दो तीन-तीन चिकित्सकों को एक साथ बुला लेते थे। इस विषयमें कोई उन्हें सुझाव देने की हिम्मत न करता।

परिवारमें डाक्टरोंके बराबर आते रहनेके कारण उनसे सुन रखा था कि छूतकी बीमारियां फैलती हैं, यह बात मेरे मस्तिष्कमें घर कर गयी थी। किन्तु प्राकृतिक चिकित्साकी ओर रुझान होनेके बाद जब भयंकर बीमारी वाले रोगियोंको देखनेका और उनकी सेवा करने का मौका मिला तो मैं यह मानने लगा कि छूतसे बीमारियां नहीं फैलती, पर छूतकी तरह मनुष्यके विचार अवश्य फैलते है। मैं लगभग ३० वर्षोंसे दिनमें एक बार अन्न खाता हूँ। सुबह शाम केवल फल दूध पर रहता हूँ। फलतः मेरा स्वास्थ्य बढ़िया रहता है लेकिन सालमें एक–दो बार सर्दी, खांसी तथा बुखार आदि का चक्कर लग जाता। बीमार पड़ना, मनुष्य शरीरका धर्म है, यह मानकर संतोष कर लेता। रोगावस्थामें जब कोई प्राकृतिक चिकित्सक मिलता तो वह कहता, अच्छा हुआ आपके शरींरका विकार निकल रहा है।

गत ६ वर्षोंसे यानी जबसे श्रीमोरारजी भाईके विशेष सम्पर्कमें आया और उन्हें सप्ताहमें एक दिन उपवास कर नीरोग देखा तो उससे मुझे भी प्रेरणा मिली।

अब मैं गत् ६ वर्षोंसे सप्ताहमें एक बार ३६ घन्टोंका उपवास करता हूँ। यानी सोमवारकी रात्रिको मैं फल-दूध खाता हूँ, उसके बाद मंगलवारको दिन और रात्रिमें कुछ न खाकर, बुधवारकी सुबह व्यायाम करता हूँ। और अपने नित्यके सारे काम काज भी करता हूँ। उपवासके दिन फल, दूध और भोजनके स्थान पर केवल सादा पानी पीता हूँ। इन

३६ घंटोंमें मेरा वजन ४ पौण्ड कम हो जाता है। किन्तु बुधवारके बाद ६ दिनों तक शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है। और ६ दिनोंमें, घटाहुआ वजन पुनः बढ़ जाता है।
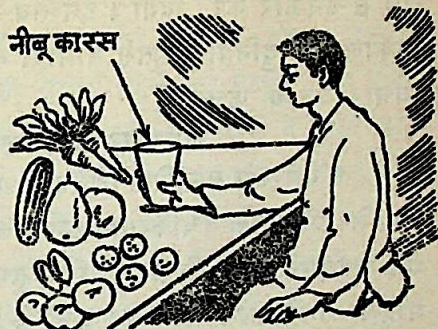
इस उपवाससे सबसे बड़ा लाभ मुझे हुआ कि इन ६ वर्षोंमें मुझे कोई भी बीमारी नही हुई। मेरे उपवास करनेके लाभको देखकर मेरे परिवारके अन्य लोग भी उपवास की ओर आक-र्षित हुए। हमलोगों के देखा-देखी हमारे यहाँ काम करने वाला दस साल पुराना सेवक सोनी राम भी मंगलवार का उपवास करने लगा। उससे पूछने पर पता लगा कि उसे महीनेमें चार बार अचानक माथेमें बड़े जोरोंका दर्द हो जाया करता था, जिसकी वजहसे इच्छा रहते हुए भी वह काम नहीं कर सकता था और सेरीडोनकी गोलियां खाकर लेट जाता था। धर्मयुगके किसी अंकमें यशपाल जैनका अविस्मरणीय पढ़ रहा था, जिसमें उन्होंने लिखा था "हमलोग संध्याको अन्न नहीं खाते।" दूध-फल ही खाते हैं। फिर एक बार मैं एनीमल वेलफेयर बोर्ड की कार्य कारिणीकी बैठकमें शामिल होनेके लिये दिल्ली गया, जहाँ अवकाशके समय एक सेवक कार्य कारिणीके सदस्योंके लिये चाय लेकर आया। हम लोग लगभग पन्द्रह व्यक्ति वहां बैठे थे, जिनमें खाद्यमंत्री, कई एम० पी० और एम०एल०सी० आदि थे। मैंने ध्यान से देखा कि लगभग दस व्यक्तियों ने चाय

लेने से इनकार कर दिया। इन सब बातोंसे मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि दुनियामें छूतसे बीमारी नहीं फैलती, पर उससे विचार अवश्य फैलते है।

उपवास के चमत्कार

इंगलैन्डसे प्रकाशित होनेवाले एक मासिक पत्रमें स्टेनली लीफके प्राकृतिक–चिकित्सा–अस्पतालके बारेमें एक महिलाने एक उपयोगी लेख लिखा है जिसे हम नीचे दे रहे हैं। यह महिला उनके साथ काम कर चुकी है।

"प्रथम विश्व महायुद्धके पहले, स्टेनली लीफ शिकागोंके इन्टरनेशनल कालेज आफ ड्रगलेस फिजिक्सके छात्र थे। इस कालेजकी स्थापना बर्नर मैकफेडनने की थी और इस कालेजके अधिकांश प्राध्यापक डाक्टर थे जो दवाओंकी अनुपयोगियाको अच्छी तरह समझ गये थे। इसी कालेजमें पढ़कर स्टेनली लीफ ने स्वास्थ्य और रोगके वास्तविक अर्थों एवं शरीरकी पुनर्निर्माणकी महान शक्तिको समझा। इस शिक्षाको वे कभी भी न भूले। इसीलिये रोगोंको दूर करनेके लिए उन्होंने अन्य पद्धतियोंके बारेमें कभी नहीं सोचा और रोगों को दूर करनेके लिए उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा विशेषकर उपवास एवं मिट्टीको ही अपनाया।
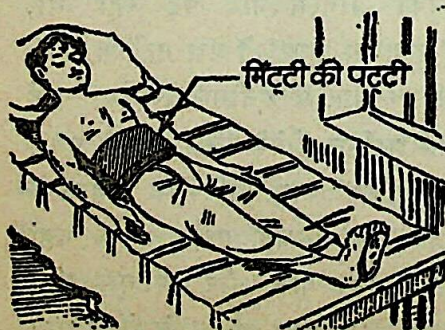
प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी सम्यक ज्ञान प्राप्तिके लिए उनके हृदयमें असाधारण पिपासा थी। इसके लिये उन्होंने

विदेशोंकी अनेक बार यात्राएँ भी की ।

स्टेनली लीफने कठिन से कठिन रोगोंका इलाज उपवास द्वारा ही किया । बर्लिनकी श्रीमती स्मिथको पेटकी एक भयं-कर बीमारी थी । उनके चिकित्सकोंने जवाब दे दिया था । लेकिन स्टेनली लीफने उन्हें ३६ दिनोंका उपवास कराकर ठीक कर दिया । यहाँ तक कि पहले जहाँ वह बिल्कुल चल फिर भी नहीं सकती थी । वहाँ उन्होंने अपनी लड़कीके विवाहमें सक्रिय भाग लिया । इसी तरह बेलफास्टकी रहने वाली जैक्सन अक्सर मूर्छित हो जाया करती थी, उसका भी इलाज स्टेनली लीफने उसी प्रकार किया ।

एक नर्स मिस मैककार्डको एक प्रकार का भयानक चर्म रोग था, जिसको चिकि-त्सकों ने असाध्य घोषित कर रखा था । लेकिन स्टेनली लीफ ने उससे १५५ दिनों का लम्बा उपवास शुद्ध वायु में कराया वह और पूर्ण स्वस्थ हो गयी ।
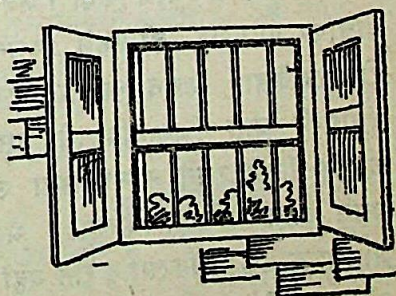
(खिड़की खुली है)

इन घटनाओंका स्टेनली लीफ स्वयं उल्लेख नहीं करते थे । वह कहते थे, लोग इन पर सहज ही विश्वास नहीं करेंगे । इसी तरह मैनचेस्टरके मिस्टर प्रोविसको भयानक रक्ताल्पताकी बीमारी थी । स्टेनली लीफने उनसे ३० दिनोंका उपवास करा-कर ठीक कर दिया । यह समाचार पत्र पत्रिकाओंमें भी छपा था । पर सम्बाददाताओंने इस पर विश्वास नहीं किया ।

उनकी समझमें तो रक्तकी कमीकी बीमारीमें तो और अधिक भोजनकी दरकार होनी चाहिए, भोजन त्याग देनेसे कैसे ठीक हो सकती है ? लेकिन श्रीमती फीसनने इसकी गवाही दी और कहा, वे इस घटनाको व्यक्तिगत रूपसे जानती हैं ।

स्टेनली लीफके एक भाई अफ्रीकामें रहते थे । उनके पैर में एक विषाक्त फोड़ा निकला । चिकित्सकोंने उसका एकमात्र इलाज आपरेशन बताया । स्टेनलीलीफने उन्हें भी उपवास कराया । उपवासके एक सप्ताह बाद ही उनकी दशामें इतना सुधार हुआ कि आपरेशनकी सलाह देने वाले चिकित्सकने कहा यह तो आश्चर्यजनक रूपसे सुधर रहा है । यह तो जादू है ।

स्टेनली लीफ ने उपवास द्वारा कितने ही रोगियोंको लंबे उपवास कराकर स्वस्थ किया । जब मैं सन् १९५३ में यूरोपकी यात्रापर गया था, तो उनसे मिलने लंदन गया जहाँ एक ऐसे रोगीको देखा, जिसने एक सौ दिनोंका उपवास किया था । संयोगकी बात जिस दिन मैं उससे मिला उसी दिन उसने कमला नींबूके रससे अपना लम्बा उपवास तोड़ा था । लीफने उससे मेरा परिचय कराया । मैंने उस व्यक्तिसे पूछा—"जब आप प्राकृतिक चिकित्सा कराने यहाँ आये थे तो आपको कौन कौन सी बीमारियाँ थीं ? उसने हँसते हुए कहा, यह पूछिये कि कौन-कौन सी बीमारियाँ नहीं थीं, क्योंकि उस समय मेरा शरीर लगभग सभी बीमारियोंका घर बना हुआ था ।

यहाँ भारत में जब कभी मैं चिकित्सकों और रोगियोंसे मिलता हूँ तो मुझे बड़ा आश्चर्य होता है । क्योंकि उनके मनमें दो-तीन दिनोंके ही उपवासकी बात बहुत तहलका मचा देता है । वे समझते हैं, उपवास करनेसे उसकी मौत जल्दी हो

जायेगी। लेकिन सही बात यह है कि जिस मौतसे वे इतना डरते हैं, वह अधिक और अनियमित भोजनके कारण ही जल्दी आता है।

अतिसारमें रामबाण जामुनके पत्ते

साधारण जीवनमें जानकारीके अभावमें हमारे सामने तिलकी ओटमें पहाड़ छिपा रहता है। जो बीमारियां साधारण घरेलू प्रयोगों, भोजन सुधार तथा आसानीसे मिलने वाली अनुतेजक जड़ी-बूटियों एवं फल-फूल आदि द्वारा आनन-फानन में ठीक हो जाती है, उनके लिए बड़े-बड़े डिग्रीधारी चिकित्सकों को बुलाकर उनसे इन्जेक्शन पर इन्जेक्शन लेनेमें हम बड़ी भूल करते हैं। कैसी विडम्बना है कि जो डाक्टर जितनी अधिक दूरसे मंगवाई हुई दवाइयोंका उपयोग करता है, उसे उतना ही अधिक ज्ञानवान समझा जाता है।

एक बार जब मैं दिल्लीमें ही था तो श्रीमनजीसे बहन मदालसाके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें चर्चा होने लगी। उन्होंने बताया कि मदालसा जी को अभी हालमें डायरिया यानी अतिसारकी भयंकर शिकायत हो गयी थी। मदालसाजी को औषधियोंपर आस्था नहीं के बराबर है। खासकर एलोपैथीकी तो वह कट्टर विरोधिनी हैं। इसलिए श्रीमनजी ने अपना आजमाया हुआ नुस्खा उन्हें काममें लेनेको कहा।
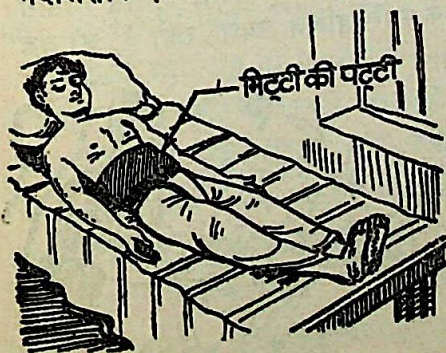
अतिसारके भयंकर दौरेपर जामुनके पेड़की ढाई पत्तियां जो न ज्यादा मोटी हो और न ज्यादा मुलायम, लेकर कूट ले, फिर उसमें जरा सा सेंधा नमक मिलाकर उसकी दो गोलियाँ बना लें, इन गोलियोंमें से एक गोली सुबह और दूसरी शामको खा लेने एवं मिट्टीकी पट्टीसे अतिसार तुरन्त वन्द हो जाता है।

खनिज लवण नष्ट हो जाते हैं

श्री मोरारजी देसाई एक बार जब कलकत्ते से दिल्ली वापस जाने लगे तो उन्हें एयरोड्रम पर छोड़ने मैं उनके साथ गया। दिल्ली जाने वाले जहाजके रवाना होनेमें अभी देर थी, इसलिए मोरारजी भाई वी० आई० पी० कक्षमें ठहरे। वहाँ कई मित्र और आ गये और तरह-तरहके प्रश्न करने लगे। एक व्यक्तिने ईखसे गुड़ बनता है और ईखसे ही चीनी बनती है, फिर आप कहते हैं कि चीनी खानेसे हानि है और गुड़ खाने से फायदा, इसका क्या कारण है? प्रश्न सुन्दर था। मैं भी उत्सुकता पूर्वक उसका उत्तर सुननेकी प्रतीक्षा करने लगा। मोरारजी भाई ने बताया, ईखसे जब गुड़ बनता हैं तब मिठास के साथ-साथ उसमें उसके सारे खनिज लवण रहते है, जो गुड़ को उचित मात्रामें खाने से लाभ पहुँचाते हैं, पर उससे जब चीनी बनायी जाती है, तो वह इतनी साफ कर दी जाती है कि मिठासके अलावा उसमें नाम मात्र के खनिज लवण रह जाते

सब्जी छीलकर विटामिन एवंलवण नष्ट करना

हैं। इसीलिए विशेषज्ञोंने चीनीको स्वास्थ्यके लिए हानिप्रद बताया है। गागरमें सागरकी तरह थोड़े शब्दोंमें प्रश्नका यह बहुत सुन्दर उत्तर था। प्रश्न कर्ता महाशयको इस उत्तरसे काफी सन्तोष हुआ।

एक बार एक मित्रसे बात कर रहा था। उसने बताया कि आज कल चीनीका प्रचार दिनों दिन बढ़ रहा है। भारत में इधर २० वर्षोंमें ३०० प्रतिशत चीनीकी बृद्धि हुई है। गुड़ खानेमें कभी लोग अपनी शान समझते थे, पर आज उसे ही खानेमें अपमान समझते हैं। देहातोंमें भी माताएं अपने बच्चों को गुड़के स्थान पर चीनी ही देना अधिक पसन्द करती है। क्योंकि गलत फहमीके कारण वे भी समझती है कि गुड़ बच्चों को नुकसान करेगा। पर दरअसल बात इससे विपरीत है।

गुड़में ईखके लगभग सभी पौष्टिक तत्व मौजूद होते हैं। उसमें प्रोटीन, लोहा, चिकनाई, कैल्शियम तथा फासफोरस आदि तत्व पाये जाते हैं। उसमें विटामिन ए. भी कम नहीं होते, जो चीनीमें बिलकुल नहीं होते।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि गुड़ आसानीसे पच जाता है जबकि चीनी बहुत मुश्किलसे पचती है।

मुंहके छाले और उपवास

हमारे मित्र किसी जमानेमें दवाइयोंके भक्त थे। पर इधर कुछ वर्षोंसे वह प्राकृतिक चिकित्साके भक्त हुये है। प्राकृतिक चिकित्साकी बनिस्बत उन्हें यौगिक क्रियायें और योगिक व्यायाम ज्यादा पसन्द है। क्योंकि यौगिक क्रियायें और और यौगिक व्यायामके बाद कुछ योगी उन्हें घी आदि तर माल खानेकी अनुमति देते है।

हम लोगोंकी मंडलीमें बैठते है तो प्राकृतिक चिकित्साकी तारीफ करते है। सादा भोजन खानेकी प्रतिज्ञा करते है। पर हमारे पाससे हटते ही अपने मन और जिह्वापर नियन्त्रण न रखनेके कारण सब कुछ गलेसे नीचे उतार जाते है। जो हो भारतीय प्राकृतिक विद्यापीठके कार्योंमें वह बहुत रस लेते है और हमारे साथ जाकर धनी मानी व्यक्तियोंसे चन्दा भी दिलवाते है। बड़े खुश मिजाज व्यक्ति है। स्वस्थ जीवनके भूतपूर्व प्रधान संपादक श्री नेवटियाजी ने तो प्रसन्न होकर उन्हें अपने प्रधान चेलेकी उपाधि दे रखी है। वह भी जब लोगोंसे मिलते है तो अपना परिचय अपने चेलेके रूपमें ही देते है। व्यापारिक काम काज के सिलसिलेमें कुछ महीनोंसे उन्होंने अपना कार्य क्षेत्र कलकत्ते से बदलकर सिलीगुड़ी बना लिया है।
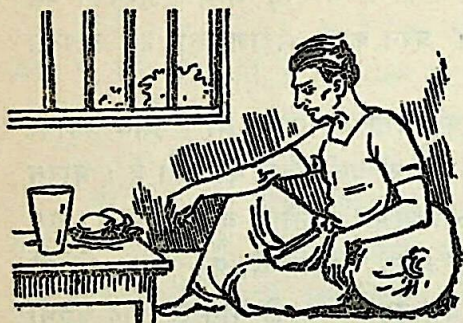
बीमारीमें भी कुछ न कुछ खाना

पिछली बार जब वह सिलीगुड़ीसे कलकत्ते आये तो उनके मुंहमें बहुत जोरोंसे छाले पड़े हुए थे और वह कोई ठोस अथवा नमकीन चीज नहीं खा सकते थे। केवल खीर खाते थे। नेवटियाजी ने उनकी उपस्थितिमें जब मुझे खीर वाली बात बताई तो मैंने हंसते हुए कहा "ऐसी दशामें इनको कोई दूसरा इलाज करना ही नहीं चाहिए। क्योंकि जिस बीमारीमें रोगी को खीर खानेको मिले उस बीमारीको दूर भगाना बहुत बड़ी

भूल है। इसपर मित्र बोले, यदि खीर खानेसे छाले ठीक हो जाते तो सचमुच मैं चिकित्सा नहीं करता। पर मीठा खाकर इन छालोंने मुझसे प्रेम कर लिया है, इसलिये उनसे पिंड छुड़ाने के लिए चिकित्सा कराना चाहता हूं। नेवटियाजी ने उन्हें फल रसपर रहनेकी राय दी। मैंने कहा फल रसके बजाय यदि आप केवल दो दिन नीबूके पानीपर रहें और नींबूके पानीका ही एनिमा लें तो आपके सारे छाले बड़ी जल्दी दूर हो जायेगें। क्योंकि मुँहके छाले अधिकतर कब्जके कारण होते हैं।

दूसरे दिन सुबह मिलनेपर मैंने उनसे नींबू–पानीका उपवास करनेको कहा। नेवटियाजी ने कहा "यह जीव उपवासपर रहने वाला नहीं है।" अतः मैंने फल रस बताया और कहा कि हो सकता है, इस उपचारसे चंगा होनेमें कुछ अधिक देर लगे। यह बात उन्हें कुछ चुभी। पर दूसरे दिन जब वह फिर मिले तो बताया २४ घण्टे बिना फल रस लिये नींबूके पानीपर ही बिता दिये। जिससे बहुत फायदा है। मैंने उन्हें एक दिन और उसी तरह निकालनेके लिये कहा, जिसे वह मान गये।

तीसरे दिन मिलनेपर उन्होंने मुँह खोलकर मुझे दिखाया, जिह्वा भी दिखाई। सारे छाले गायब थे। वह बहुत खुश नजर आते थे। तब उन्होंने मुझे बताया कि छाले क्योंकर हुए और किस प्रकार चिकित्सकोंने उन्हें उसके लिये लम्बा–चौड़ा खर्चा बताया था।

१५ दिन पहले उनके मुँहमें कुछ छाले हुए। उन्होंने होम्योपैथी चिकित्सकसे मिलकर दवा ली। जब छाले ठीक नहीं हुए और कोई भी ठोस और नमकीन चीज खानेमें उन्हें कष्ट होने लगा तो अपनी श्रीमतीजी की रायसे वह खीर खाने

लगे। खीर स्वादिष्ट तो बहुत लगी और खायी भी बहुत गयी पर छाले ठीक नहीं हुए। संयोगसे उन्हें एक परिचित धनी-मानी व्यक्तिके यहाँ किसी कामसे जाना पड़ा, जिन्होंने उनके छालेकी बात सुनकर अपनी कम्पनीके डाक्टरसे मुफ्तमें इलाज करानेकी बात कही। जिसपर वह तुरन्त राजी हो गये। चिकित्सक महोदयने छालोंको देखकर उन्हें इन्जेक्शन और दवाईयों का पुर्जा लिखकर दिया। जिनका मूल्य ८०) होता था। औषधि और इन्जेक्शनका मूल्य सुनकर वह घबराये और बोले "मैं तो जैन हूँ, और डाक्टरी दवा लेता ही नहीं।"

चिकित्सकने कहा इलाज न करानेसे अधिक नुकसान होगा, यह भय दिखलाकर इन्जेक्शनके बजाय गोलियां ही खाने की राय दी। बाध्य होकर केवल ४ रुपयेकी गोलियां उन्होंने खरीदी। पर उनका सेवन नहीं किया।

इस बीच कलकत्ते आनेका प्रोग्राम उनका था ही। सोचा, कुछ दिन पहले चलें और अपनी चिकित्सा करायें। वह कलकत्ता आये और यहाँ आकर वह बिना किसी दवाके ही आनन-फाननमें अपने रोगसे छुटकारा पा गये।

धनसे स्वास्थ्यकी खरीदारी

जीवनके लिए जल बहुत आवश्यक है। जलके अभावमें दुनियाके सारे काम ठप हो सकते हैं, लोगोंकी ऐसी दृढ़ मान्यता है। यह जल जब आवश्यकतासे अधिक मात्रामें हो जाता है तब प्रलयंकारी स्थिति पैदा करता है। गांवके गाँव नष्ट हो जाते है और हजारों व्यक्तियोंको जीवनसे हाथ धोना पड़ता है।

यही स्थिति धनकी भी है। जीवन-यापनके लिए धनका होना बहुत आवश्यक है पर जब यह आवश्यकतासे अधिक हो

जाता है तो अपना विनाशकारी प्रभाव दिखलाता है। नीचेकी दो सच्ची घटनाओंसे पाठक समझ सकते हैं कि रोग बढ़ता है या घटता है।

मेरे एक पुराने मित्र "स्वस्थ जीवन" में प्रकाशित गठियाके प्राकृतिक उपचार पर एक लेख पढ़कर बहुत प्रभावित हुए और मुझसे कहने लगे कि हमारे जंवाईको कई वर्षोंसे गठिया है। लेखके लेखकको वे एक बार रोगीको दिखाना चाहते हैं। वे मेरे लंगोटिया दोस्त थे, इसीलिए मैंने जवाईकी उम्र पूछी। वे ३५-३६ वर्षके थे। आर्थिक स्थितिके सम्बन्धमें पूछने पर उन्होंने कहा बहुत अच्छी है। कलकत्तेमें अपना मकान है, गाड़ियां हैं, कारखाने हैं, खर्चकी कोई परवाह नहीं है। तब मैंने हंसकर कहा, लेखकने तो गठियाके बारेमें सारी बातें स्पष्ट लिख दी है। जवाई साहबसे कहिये कि वे पहले अपना मानस बनावें। प्रकृति-निकेतनमें भर्ती हो जायं और चिकित्सा कराकर ठीक हो जायं। आज तक तो रुपयोंके जोर से औषधि चिकित्सकोंसे चिकित्सा कराकर, इंजेक्शन लेकर रोगको केवल बढ़ाया है। अब तो नियंत्रणकी बारी है। उन्होंने मुझसे हां-हां किया।

गठियाके लेखके लेखक "भारतीय प्राकृतिक विद्यापीठ" के आचार्य हैं। पुरानी मित्रताके नाते मैंने उन्हें उनके यहां भेज दिया। पर मेरे मित्र और उनके जंवाई महोदयका मानस, जो इस तरहका बना हुआ था, कि रुपयोंके जोरसे जैसे मकान, गाड़ी, फरनीचर, रेडियो, कपड़े आदि खरीदे जाते हैं, वैसे ही

स्वास्थ्य भी खरीदा जा सकता है। इंद्रिय संयमकी क्या जरूरत है। इंद्रिय नियन्त्रण करके ही स्वास्थ्य लाभ करें, तो फिर धनकी क्या उपयोगिता ?

मेरे बड़े लड़केके मित्रकी माताजीका स्वास्थ्य कई वर्षो से खराब चल रहा था। चिकित्सकोंने गठियाका निदान किया और दवा इंजेक्शनका दौर जोरोंसे चलता रहा। गत २ वर्षो से रोगिणीकी ऐसी स्थिति रही कि करवट बदलना भी असंम्भव हो गया।

शहरोंमें जैसा साधारणतया होता है, ये भी यही सोचते थे कि रुपये खर्च करके हम स्वास्थ्य प्राप्त कर लेंगे। प्राकृतिक चिकित्साकी जब कभी किसी ने राय दी, उन्होंने उसपर ध्यान ही नहीं दिया। मध्यवित्त स्थिति होनेके कारण चिकित्सकोंकी फीस और दवाओंका मूल्य देते-देते घबड़ा गये, तब प्राकृतिक चिकित्साकी शरण लेने की सलाह देनेवाले मित्रों की बात उन्हें याद आयी और वे रोगीको ऐसी स्थितिमें प्रकृति-निकेतन लाये किंतु वहां के मुख्य चिकित्सक भी भर्ती करने में घबड़ाते थे।
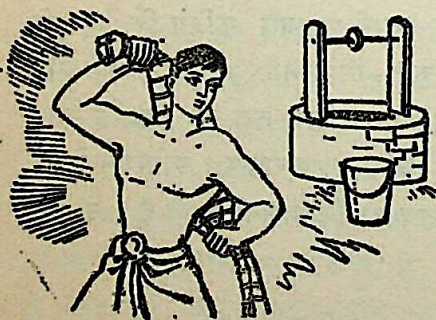
स्नानके बाद तौलियासे रगड़ना

एक महीनेकी प्राकृतिक चिकित्साके बाद, रोगिणीसे

मेरी बातें हुई तो उसने कहा कि मेरी बीमारी, पांच आने दूर हो गई है। जहां मैं वर्षों से पलंग पर करवट नहीं ले सकती थी,

यहां अब खाटसे उतर कर खाटके चारों ओर एक चक्कर लगा लेती हूं। मुझे अब विश्वास होने लगा है कि यदि मैं कुछ महीने यहां और रहूंगी तो अवश्य ठीक हो जाऊंगी।

पैरकी गांठ–जहां औषधियां हारी

कुछ दिनों पहले एक निकटके सम्बन्धीका टेलीफोन आया कि उनके एक रिश्तेदारको मेडिकल विभागके लोगों ने अपने यहां ६-७ महीने चिकित्सा करने के बाद यह कहकर डिस्चार्ज कर दिया कि वे इन्जेक्शन और औषधियों द्वारा इलाजसे अधिक और कुछ नहीं कर सकते। अतः वह किसी की सलाह से अब प्राकृतिक चिकित्सा करना चाहते हैं।

मेरे रिश्तेदार प्राकृतिक चिकित्साकी बातें तो बराबर सुनते रहते हैं, पर उनके परिवारमें जब कोई बीमार होता है तो इन्जेक्शनों और गोलियों का ही उपयोग करते हैं। उनके द्वारा अपने निकटतम रिश्तेदारको प्राकृतिक चिकित्सा विभाग में भेजनेकी बात सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने उन्हें भरती करवा देनेका आश्वासन दिया और कहा कि ऐसे मामलोंमें हम केवल प्रयत्न कर सकते हैं, पर स्वस्थ कर देनेकी पूरी गारंटी नहीं दी जा सकती। हो सकता है, आपको स्वस्थ होनेमें कई

महीने लग जायं ।

उन्होंने कहा, आप भरती करा दीजिये । लाभ होगा तो रोगी स्वतः वहां रहकर चिकित्सा करायेगा । वह भरती हो गये । हालत यह थी कि सोसाइटीके अस्पतालमें उनको कुर्सी पर उठाकर लाना पड़ा । वह स्वतः करवट नहीं बदल सकते थे । एक स्थानसे दूसरे स्थान पर नहीं जा सकते थे । पूछने पर उन्होंने बताया कि आरम्भमें उनके पैरमें एक छोटी–सी गांठ हुई, जिसका इलाज करते–करते यह हालत हो गयी कि दोनों पैर घुटनोंके पास मुड़ गये जो अब सीधे नहीं होते । मैं साधारण स्थितिका आदमी मेरा जीवन भारस्वरूप हो गया । यदि मैं प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा ठीक हो जाऊँ तो सारे जीवन इसका प्रचार करूँगा ।

मैंने हंसकर कहा, इस विभागमें आनेवाला रोगी ऐसी ही प्रतिज्ञा करता है, पर ठीक हो जाने पर अपनी प्रतिज्ञा भूल जाता है ।

प्राकृतिक चिकित्सा विभागमें कुछ दिन रहनेके बाद दूसरे लोगोंकी कई बीमारियोंको बिना इन्जेक्शन और औषधियोंके ठीक होते देखें, उन्हें भी अपने स्वस्थ होनेकी आशा बंधी । धीरे-धीरे उनके पैर खुलने लगे और तीन महीने बाद ऐसी स्थिति आयी

कि दो खाटों का सहारा लेकर वे अपने पैरोंको धाआ खोल

लेते और थोड़ा भार भी ले लेते ।

उनकी दशामें सुधार होता देख दूसरे रोगियोंका भी उत्साह बढ़ा और उनका भी । ६-७ महीनेकी चिकित्साके बाद लकड़ीके सहारे अच्छी तरह चलने फिरने लगे और बाजार भी जाने लगे ।

अकल या नकल

मेरे बड़े लड़के निर्मल कुमारके विवाहके उपलक्षमें मेरे यहाँ एक पार्टीका आयोजन था । बहुतसे मित्र आये थे । जब कुछ मित्र बैठते हैं, तब इधर-उधरकी चर्चाओंका छिड़ना स्वाभाविक ही है । प्राकृतिक चिकित्साकी चर्चा प्रारम्भ हुई तो उसी समय श्री ईश्वरदास जी जालान (विधि मंत्री, पश्चिम बंग सरकार) भी आ गये । उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी अपना अनुभव सुनाना प्रारम्भ किया । वे आजसे लगभग ४०-४५ वर्ष पहलेकी घटना सुना रहे थे । कहने लगे कि एक मित्रने किसी पुस्तकमें पढ़ा कि छिलकों सहित फल खाना बहुत लाभप्रद होता है, क्योंकि विटामिन खूब होता है । यहाँ तक कि उस मित्र महोदयने शरीफेके छिल्के भी हमें खिलाए ।
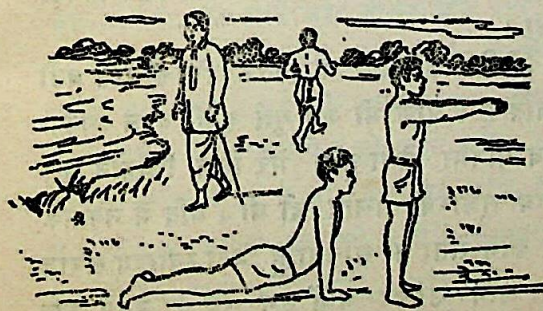
प्रातःकाल व्यायाम एवं टहलना

एक मित्रके पूछनेपर कि उस समय आपका स्वास्थ्य क्या खराब था ? उन्होंने हँसकर कहा कि खराब नहीं था, तो अच्छा भी

नहीं था, पर बिना खर्च किए बढ़िया स्वास्थ्य हो सके, इस लोभको मैं न सम्हाल सका और इस चक्करमें फंसा। सब लोग हँस पड़े।

छिलके खानेके प्रयोगके साथ-साथ मैं उन दिनों जकरिया स्ट्रीटसे विक्टोरिया मेमोरियल तक दौड़ लगाता एवं व्यायाम करता और इस दलील पर कि घोड़ा भी कच्चा चना खाकर शक्ति अर्जित करता है, मैं केवल एक मुट्ठी चना खाकर रह जाता था। धीरे-धीरे स्वास्थ्य गिरने लगा। घर वालों तथा अन्य मित्रों के कहने सुननेपर खान-पानका क्रम बदला और फिर बिगड़ा स्वास्थ्य ठीक हुआ।
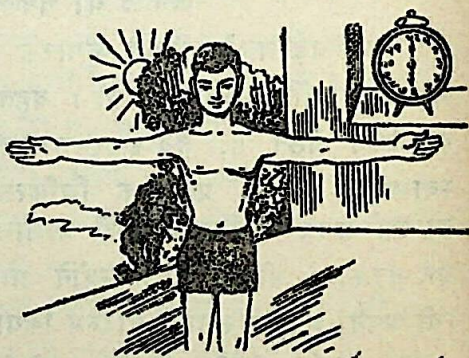
६ बजे प्रातःका व्यायाम

मैं मानता हूँ कि कई रोग प्राकृतिक चिकित्सासे बड़ी जल्दी ठीक हो जाते हैं। आज भी जब मुझे थोड़ी बहुत शिकायत होती है, तब एनिमा लेता हूँ। मेरे मित्र जिन्होंने मुझे उन दिनों स्वास्थ्य सुधारकी सलाह दी थी। यदि मैं नकलके स्थानपर अकलसे काम लेता तो सोचता हूँ मेरा स्वास्थ्य खराब नहीं होता। जो लोग उनकी बातें सुन रहे थे उनमें कुछ लोगोंने तो उनके इन विचारोंको प्राकृतिक चिकित्साके विरोध में माना और कुछ लोगोंने पक्षमें, एक ही वस्तुके दो पहलू होते हैं। लोग अपनी-अपनी रुचिके अनुसार उसके अर्थ लगाते हैं।

क्या प्राकृतिक चिकित्सा मंहगी है ?

एक दिनकी बात है। संध्याके समय मैं अपने बगीचेका निरीक्षण कर रहा था कि अचानक मेरी बायीं आँखमें दर्द आरम्भ हुआ और उससे पानी गिरने लगा। घर लौटकर अपनी धर्मपत्नीको दिखलाया आँख कुछ लाल थी। सारा परिवार और खुद प्राकृतिक चिकित्साके सिद्धान्तोंके कट्टर पक्षपाती होनेके नाते उस दिन संध्याका खाना बन्दकर दिया और आँख पर मिट्टीकी पट्टी आधे-आधे घन्टेके अन्तरसे लगभग चार-पाँच बार दी। जिस आँखमें दर्द था उसपर सोनेके समय ठंडे पानीमें भिगी हुई रुई रखकर कपड़ेकी पट्टी हल्केसे बांध दी। रात्रिमें अच्छी नींद आयी। सुबह दर्द आधा था, दूसरे दिन केवल नींबू–पानीपर रहा। आँखपर चार–पाँच बार आध–आध घन्टेके अन्तरपर मिट्टीकी हल्की पट्टियां दी। दोपहर तक दर्द बिलकुल ठीक हो गया। संध्याको जोरकी भूख लगी। कुछ मौसमी फल खाये और तीसरे दिन प्रातः ही मैं अपने कार्य पर पूर्ववत् लग गया। इस बीच जिन मित्रोंको मेरी आँखमें दर्दकी बात मालूम हुई और जब उन्होंने दूसरे दिन ही ठीक देखा, तब वे आश्चर्यचकित हो पूछने लगे। एक मित्र ने कहा आपकी आँख में दर्द है और आप बड़े मजेमें दिखलाई पड़ रहे है। कौन-सी जादुई दवा की ? मैंने हंसकर कहा "यहाँ तो एक ही चिकित्सापर विश्वास हैं और जीवन में उसीका उप–योग आज १८ वर्षोंसे करके रोगोंसे मुक्त होता हूँ।"

महात्मा का मन्त्र

श्री जयनारायण जी व्यासके सभापतित्वमें एक कवि

सम्मेलन हो रहा था। मैं भी उपस्थित हुआ। रामकुमार जी भवालका भी वहीं बैठे थे। एक परिचित मित्र आये जिनसे जब मैंने उनके स्वास्थ्यकी चर्चा की तो उन्होंने हँसते हुए कहा, आजसे २० साल पहले एक महात्माने मुझे एक मन्त्र बताया था, मैं उसीकी साधना करता हूँ और स्वस्थ हूँ। मैंने कहा, "साधना अगर मनुष्य करे तो बराबर स्वस्थ रह सकता है, चाहे वह साधना व्यायामकी हो, आसनोंकी हो अथवा भोजन नियन्त्रणकी हो।"

अवकाशके समय जब उनसे फिर बातें होने लगीं तो उपर्युक्त मन्त्रकी व्याख्या पूछने पर उन्होंने बताया कि "सर्वे दोषाः मलाश्रिताः आहारम् पचति शिखीदोषा आहार वर्जिताः।"

मैं बराबर प्रयत्न करता हूं कि मेरे शरीरका मल साफ होता रहे और जब कभी स्वास्थ्यमें थोड़ी गड़बड़ी देखता हूं तो भोजन बन्द कर नीबू पानी लेता हूं। यही कारण है जो आज मैं पूर्ण स्वस्थ हूं।
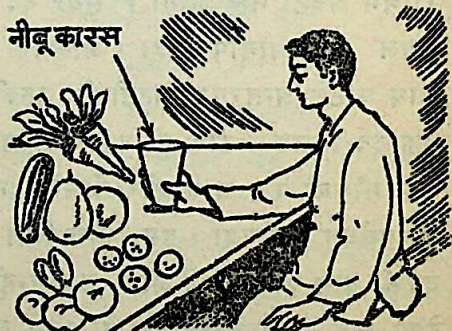
प्राकृतिक चिकित्साका दोष

सदाकी भाँति एक वार विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयमें दीपावलीका प्रीति सम्मेलन हुआ। श्री जयनारायण जी व्यास इसके प्रधान अतिथि थे। वह मंचपर बैठे थे।

जब मैं पहुंचा तो व्यासजी ने एक मित्रसे पूछा, धर्मचन्द

जी तो देखनेमें अधिक बड़े नहीं मालूम देते पर बहुतसे लोग इनके पाँव पड़ते हैं। इनकी उम्र क्या है? सम्मेलन खतम होनेपर मित्रने जब उपर्युक्त बात मुझसे कही तो व्यासजीके पास गया और पूछा मेरी उम्रके सम्बन्धमें आपका क्या अनुमान है ?

देखनेमें मुझे तो आप ४५ के लगभग मालूम होते हैं। व्यासजी ने कहा। मैं हंसकर बोला, महाराज, अभी तो मैं रशियासे घूमकर आया हूं। वहाँ पर किसीने भी मेरी उम्रका अन्दाजा ४० से अधिक नहीं लगाया था। मेरी आफीशियल उम्र ४० की है, यों मैं ५५ का हूं। यह तो प्राकृतिक चिकित्सा का दोष है जो उम्र कम कर देती है। सोसायटीके प्राकृतिक चिकित्सक मोतीलाल पोद्दार ३५ के हैं और लोग उन्हें २५ का समझते हैं। कुछ लोग तो उनसे चिकित्सा यह समझकर नहीं कराते कि २५ वर्षके आदमीका ज्ञान ही कितना होगा ? यही आगरेके श्री निरंजनलाल जी पोद्दारका है। वह ६५ वर्षके हैं पर देखने वाले उन्हें ४५-५० से अधिक का नहीं कहते। यह सुनकर वह हंसने लगे।

फोड़ोंने शिकायत की

रविवारका दिन था। मैं जैन उद्यानसे लौटा ही था कि एक परिचित मित्र अपने बाल-बच्चों सहित आये। बातोंके सिलसिलेमें जब मैंने यह बात उनसे कही कि ६ अक्टूबरको मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटीमें पिताजी के घुटनेमें चोट लगी थी और बिना एण्टी टिटनेस इन्जेक्शन, बिना पेंसिलिन इंजेक्शनके केवल लगे हुए स्थानमें तथा अगल-बगल गरम थैलीका सेंक करके और उन्हें तीन दिन तक केवल फलाहार पर रख

कर घावको सुखाया, तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ, स्व. पिता जी की आयु तब ८४ वर्षकी थी । वे बिना लिफ्टके सहारे ५-६ तल्ले मकान पर आसानीसे चढ़ जाते थे । सोसाइटी जानेका नित्य का क्रम बना रखा भोजनमें फल, सब्जी, दूध तीन अन्न एक भाग था, चोट लगनेके दूसरे दिनभी सोसाइटी गये थे । ये बातें उनके लिए कौतूहल-वर्धक थीं ।

मेरी पत्नीने बड़े पुत्र निर्मलकी वहूके सम्बन्धमें बताया कि जब उसके पेटमें तीन महीनेका गर्भ था, तब उसे बीच-बीच में बेहोशी आने लगी । पुराने जमानेका देहाती परिवार होता तो उसे भूत पिशाचका कोप मानकर झाड़-फूंककी जाती, गरम चिमटे लगाये जाते, लाल मिर्चकी धुनी दी जाती और न जाने क्या-क्या किया गया होता । यदि आधुनिक ढंगका शहरी परिवार होता, तो डाक्टरी इलाज आरम्भ होता और हिस्टीरियाके नामपर सैकड़ों इन्जेक्शन लगाये जाते और कड़वी दवाइयां पिलाई जाती । पर हमारे यहां उसकी मालिश और भोजनमें परिवर्तन किया गया । फलाहार और रसाहार बढ़ा कर अन्नकी मात्रा कम कर दी गयी । बिना किसी कष्टके समय पर बच्चा हुआ । आज वह पूर्ण स्वस्थ है ।

सब बातें सुनकर मित्रकी बड़ी लड़की, जो बरेलीमें व्याही है, कहने लगी कि हमारे यहां किंवदन्ती भी है कि यम-राजने दो फोड़ोंको संसारमें भेजा है। उनमे से एक फोड़ा जो शीघ्र यमराजके पास लौटा, तो उन्होंने इतनी जल्दी वापस आनेका कारण पूछा।

इसपर वह रोता हुआ और अपने भाग्यको कोसता हुआ कहने लगा कि मैं तो एक साधारण गृहस्तके यहां पहुंचा जहां नानी मांके कहनेके अनुसार गरम-गरम पुलटिस लगायी जाती थी और खानेको कुछ नहीं मिलता था। क्योंकि जिस व्यक्ति को मैं हुआ था, परिवारमें वही कमाने वाला था और मेरे होने से परिवारकी आमदनी बन्द हो गयी थी, इसलिए उनके व्यवहारसे घबड़ाकर मैं जल्दी चला आया।

कुछ दिनों बाद दूसरा फोड़ा प्रसन्न चित्त लौटा, तो यम-राज के पूछने पर उसने बताया कि मैं तो समृद्धिशालीके यहाँ गया था, जहां सब तरह की सुविधा थी। नर्स, डाक्टर, परि-चारक आदि हर समय तैयार रहते थे। कई तरहकी औषधियां बदल-बदल कर लगायी जाती थीं, मुफ्तकी सलाह देनेवाले भी बहुत आते थे। खानेको भा गरम-गरम दूध, हलवा इत्यादि मिलता था। इसलिए मैंने डटकर वहां आसन जमाया, काफी दिन रहकर जब थक गया, तब लौटा हूं।

मैंने हंसते हुये कहा कि फोड़ेको किसी प्राकृतिक चिकि-त्सकसे पाला नहीं पड़ा, अन्यथा उसे गरम-ठंडा सेंक करके नीबूका एनीमा देकर और भोजन बन्द करके रोगीको केवल नीबूके पानी पर रखता कि वह जाकर यमराजसे कहता कि मैं तो ऐसे सूमके यहां गया कि माल खिलानेके बजाय वह नीबू

निचोड़ा करता था, इसलिये अब उसके दरवाजे नहीं जाऊंगा। यह सुनकर सब हंसने लगे।

दूधका छेना-खोआ आदि बनाना उसे नष्ट करना है

आदरणीय पुरुषोत्तम दासजी टंडन जितने हिन्दीके समर्थक थे, उतने ही प्राकृतिक जीवनके भी पृष्ठपोषक थे। उन्होंने नमक, चीनी आदि छोड़ रखी थी वे जब कांग्रेसके अध्यक्षके रूपमें कलकत्ते आये, उस समय मुझे उनसे मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ।

जब मैंने उनसे प्राकृतिक चिकित्साकी चर्चाकी तो उन्होंने कहा, तुम जिस राज्यमें रहते हो, वहांकी सरकार दिन दहाड़े लोगोंका स्वास्थ्य खराब करनेके लिये उद्योग चलाती है, वहां तुम्हारी प्राकृतिक चिकित्सा कैसे पनपेगी ?

अपनी बातको स्पष्ट करते हुए उन्होंने सौम्य भावसे कहा, आज कलकत्तेमें जगह जगह रसगुल्ला, छेना तथा अन्य मिठाईयोंकी दुकानें है। वे स्वास्थ्य को खराब करने वाले उद्योग नहीं है तो और क्या है ? समाज और देशके हितके लिये उन्हें तुरन्त बन्द करना चाहिए।
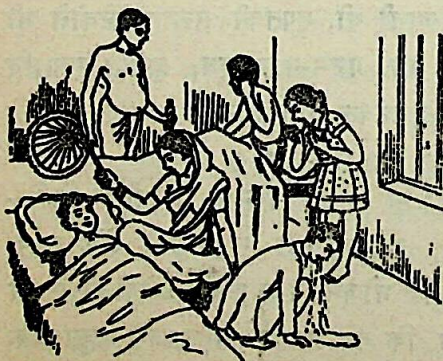
बीमार परिवार

मैंने लोगोंसे सुन रखा था, टंडनजी अपनी बातोंका विरोध सुननेके आदी नहीं है। इसलिये नम्रता पूर्वक डरते-डरते कहा कि कलकत्ते के डाक्टर तो रोगीको भी छेना और रसगुल्ला पथ्यमें खिलाते है। इसपर वे मुस्कराये और

बोले, जब कुएँमें ही भांग पड़ जाये तो उसपर अफसोस होता है । मैं दूधके उपयोगका विरोधी नहीं, दूध तो स्वास्थ्यके लिये बहुत अच्छी चीज है, पर उसे बिगाड़कर उपयोगमें लानेका विरोधी हूँ ।

टंडनजी की बातें बहुत अंशोंमें ठीक थी । विदेश-यात्रामें मैंने हर एक देशमें देखा, आज वहाँ दूधकी नदियां बहती है, कहा जाये तो अत्युक्ति नहीं होगी । क्योंकि किसी स्टेशन, एरोड्रम, शहरमें जाइये हर जगर हर समय दूध उपलब्ध होता है । क्योंकि वहां दूधको बिगाड़कर उसका सामान नहीं बनाया जाता । जहां गर्भिणियों, रोगियों, बच्चों बूढ़ोंको दूध न मिले, वहां लोगोंके जीभके स्वादके लिये हजारों मन दूध विभिन्न मिठाईयोंके रूपमें उपयोग किया जाये, यह बड़े दुःखकी बात है ।

बंगाल सरकारने दूधका छेना बनाकर, खोआ बनाकर बेचने की मनाही कर दी है । यह देखकर यह कहावत याद आती है—भगवानके यहां देर है, अन्धेर नहीं है ।

अमरूद नुकसान करता है
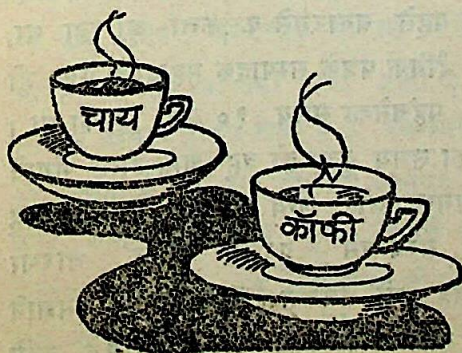
एक बार एक मित्रके यहाँ पार्टीमें शामिल हुआ । मैंने कहा, सुबहके जलपानमें केला, खजूर, नारियल और दूध बहुत लाभकारी होते हैं । हानिकारक चाय,

टोस्ट, बिस्कुट तथा जलेबी आदिके बदले इनका सेवन गुणकारी है।

हमारे यहां बहुतोंकी धारणा हैकि खजूर गरम करती है, केला कब्ज करता है, और खाली पेट नारियल खानेसे खांसी आने लगती है। परन्तु मैं छोटी उमूके बच्चोंसे लेकर ६०–७० वर्षकी उमूके वयस्कों तक सैकड़ों लोगोंको जानता हूँ जो इन चीजोंका सेवन करते है और स्वस्थ हैं।

सभी मित्र मेरी बातोंमें रस ले रहे थे। परन्तु उनमेंसे एक मित्र बड़ी उत्सुकताके साथ मुझसे पूछ-तांछ भी करते जाते थे। जब मौसमी फलोंमें अमरूदकी तारीफ मैं करने लगा तब वह उछल पड़े और कहने लगे, "आपकी सब बातें मान सकता हूँ, पर अमरूदकी बात नहीं मान सकता। अमरूद बड़ी निकृष्ट चीज है। इसके खानेसे तो जरूर वायु पैदा होती है।"

मैंने उनको समझाया और कहा, "आपकी यह धारणा गलत है। क्योंकि विशेषज्ञोंने इस फलको गरीबोंका सेब कहा है। आजसे साल भर पहले बनारससे कलकत्ता आ रहा था, साथमें एक प्रतिष्ठित दैनिक पत्रके सम्पादक महोदयके पुत्र भी थे। कलकत्ते गाड़ीके पहुंचनेका समय १० बजे दिनका था। रास्तेमें जब जलपानका समय हुआ तो वह चाय-टोस्ट मंगाने लगे। पर मैंने अमरूद और अन्य फलोंके लिए आग्रह किया। फलोंके सम्बन्धमें पुरानी गलत धारणा के मानने वाले वह भी निकले। मेरे बहुत समझाने पर कहीं वह फलोंका नाश्ता करनेपर राजी हुए। मैंने उनसे

कहा, मैं भी तो आखिर आपके साथ ही फल खा रहा हूँ और आपके साथ ही कलकत्ते तक चल भी रहा हूँ। विश्वास मानिये आपको इससे किसी प्रकारका कष्ट न होगा। तब जाकर सबेरे–सबेरे उन्होंने फलोंका नाश्ता करना स्वीकार किया।
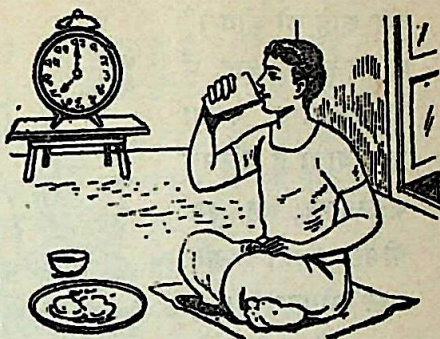
प्रातः ८ बजेका फलका नाश्ता

कलकत्ता पहुंचने तक जब उनके शरीरमें किसी प्रकार की गड़बड़ी नहीं हुई और उनकी गलतफहमी भी दूर हो गयी।

सप्ताहमें एक दिनके उपवाससे लाभ

संसारकी हर मशीनरीको कुछ समय चलानेके बाद उसे आराम देनेका नियम है। पर, शरीरकी पेटरूपी मशीनरीको आजके लोग आराम देना नहीं चाहते। फल यह होता है कि वह थक जानेपर जबर्दस्ती आराम लेती है। उसके जबर्दस्ती आराम लेनेसे व्यक्तिको कष्ट होता है। क्योंकि शरीर वह आराम बीमार होकर लेता है। जब व्यक्ति बीमार पड़ता है, तो सोचता है, इस बार ठीक हो जानेपर जरूर उपवास करूंगा और शरीरको आराम दूंगा, जिससे बीमारीका कष्ट तो न भोगना पड़े। पर इस प्रचलित लोकोक्ति "दुखमें सुमिरन सब करे, सुखमें करे न कोय। जो सुखमें सुमिरन करे,

दुख काहे को होय।"
के अनुसार बाद में
वह उपवास करना
भूल जाता है जिसके
फलस्वरूप वह पुनः
बीमार पड़ता है और
कष्ट भोगता है।
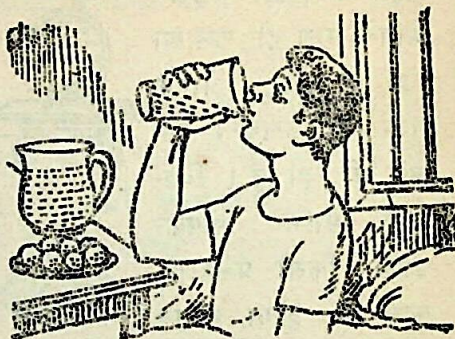
नींबू और फलका रस पीते हुए

मैं अपने परिचितोंमें अपनेसे बड़े उम्र के बुजुर्गों, पंडितों, राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं, चिकित्सकों, अध्यापकों, व्यवस्थापकों और जवान लड़के–लड़कियोंको जानता हूं जो मिलनेपर प्रायः किसी न किसी बीमारी अर्थात खाँसी, बुखार, पेटका दर्द, सर दर्द तथा निमोनिया आदिकी शिकायत किया करते हैं। मुझे ऐसे लोगोंकी खामख्याली पर मन ही मन हंसी आती है। क्योंकि वे अज्ञानी जीव स्वास्थ्यके नियमोंको न जाननेके कारण ही व्यर्थ कष्ट भोगते हैं। पर इसके अलावा ऐसे लोगों को भी जानता हूं जो इसका पूरा पूरा ज्ञान रखते हैं और सप्ताहमें कमसे कम एक दिनके उपवासके नियमका पालन नहीं करते।

प्राकृतिक चिकित्सासे सम्बन्ध होनेके बाद इन पच्चीस वर्षोंमें देश, विदेशके प्राकृतिक चिकित्सकों तथा अन्य स्वास्थ्य विशेषज्ञोंसे मिलनेका मौका मिला। ये लोग अपने जीवनमें सप्ताहमें एक दिनका उपवास नियमित रूपसे करते हैं और कभी बीमार नहीं पड़ते। इनमेंसे कोई कोई तो साठ सत्तर और अस्सी वर्षके उम्रके भी मिले, जो आज तीस–चालीस

वर्षों से इस नियमका पालन कर रहे हैं और जिन्हें सर्दी, बुखार, सरदर्द अथवा पेट दर्द आदिकी बीमारी कभी नहीं हुई।

आज देशके सामने भीषण अन्न संकटकी समस्या उपस्थित है, जिसको सुलझानेके लिए यही एक उपाय है कि देशका हर व्यक्ति सप्ताह में कमसे कम एक दिन या ३६ घन्टेका उपवास अवश्य करे। इससे देश सेवा भी होगी और स्वास्थ्य भी सुधरेगा। स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री भू० पू० प्रधानमंत्री का भी यही नारा था।

प्राकृतिक चिकित्सा और राजा बलदेवदास बिड़ला

आजकल थोड़ी ही उम्रमें लोगोंका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। इस सम्बन्धमें एक विवाहसे लौटते समय एक मित्र से बातचीत हो रही थी, तभी उन्होंने कहा कि लोग धन कमानेके पीछे इतने अधिक व्यस्त रहते हैं कि वे स्वास्थ्यकी ओर ध्यान ही नहीं देते जिसका फल यह होता है कि उनका स्वास्थ्य जल्दी ही जबाब दे जाता है। धन कमानेके बाद सुख देनेके नाम पर लोग शरीरको इतना नाजुक बना लेते हैं कि फिर औषधियोंके बलपर ही वह चलता है।

इसी सिलसिलेमें मित्रने स्वर्गीय राजा बलदेवदास जी बिड़लाका एक संस्मरण सुनाया। उन्होंने कहा, संस्मरणकी घटना छोटी-सी ही है और बात भी अधिक नहीं है। जिस प्रकार हमारे ऋषि–मुनियोंने अपनी विद्वता के प्रभावसे छोटे-छोटे सूत्रोंमें जीवन का सार रख दिया है यानी गागरमें सागर भर दिया है, उसी प्रकार राजा साहब द्वारा कही गयी स्वास्थ्य सम्बन्धी बातें स्वास्थ्य चाहने वालोंके लिए बड़ी ही ज्ञानवर्वक और उपयोगी हैं।

जीजन–शक्ति देने वाले खाद्य पदार्थ
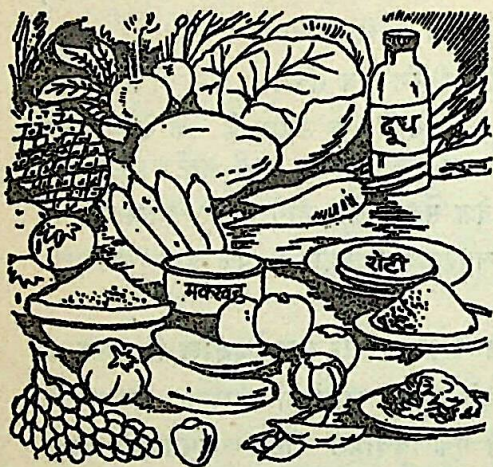
जब ज्योतिषियों ने राजा साहबको बताया कि उनकी मृत्यु ५० वर्षकी ही उम्रमें हो जायगी तो अपने जीवनके अन्तिम क्षण भागीरथी के किनारे बाबा विश्व-नाथके चरणोंमें बितानेके लिए वे काशी रहने लगे और अन्नकी जगह फलका सेवन शुरू कर दिया। परिणाम यह हुआ कि दिनों दिन उनका स्वास्थ्य सुधरने लगा और मृत्युका क्षण टल गया। तब उन्होंने अपने जीवनके कार्यक्रममें अन्य नियमोंके साथ-साथ नित्य घूमनेका भी नियम चालू किया। एक दिन धूपमें जब वह घूम रहे थे तो कलकत्तेके एक प्रतिष्ठित शिक्षित व्यक्तिने कौतूहल-वश उनसे पूछा, "राजा साहब, आप धूपमें घूमते हैं ? नहीं घूमना चाहिए। शायद इससे नुकसान हो।" इस पर वह हंसने लगे और मुस्कराते हुये बोले, "भाई, तुम शरीरके नियमको नहीं जानते। इसका यह नियम है कि जो इसे कष्ट देता है, उसे यह सुख पहुंचाता है। इसलिए, यदि तुम थोड़ा-सा भी सुख चाहते हो तो शरीरको कष्ट देते रहो। ऐसा करनेसे यह तुम्हारे वश में रहेगा। कलकत्ते वाले मित्र उनके सामने तो कुछ नहीं बोले, पर उसका फल यह हुआ कि आज वे अस्वस्थ हैं।

आजका आधुनिक युग उनकी बातको दकियानूसी विचार समझकर उसपर कुछ ध्यान नहीं देता ।

स्वास्थ्य चाहने वाले व्यक्तियोंको राजाजीके सूत्र रूपी उपर्युक्त शब्दोंका पूरा अर्थ निकालकर शरीरसे यदि काम लेना है तो विस्तर पर पड़े-पड़े शरीरको आराम न देकर सुबह तड़के ही घूमने दूर तक निकल जाना चाहिए, आसन करना चाहिये या व्यायाम करना चाहिए। तथा स्वाद पर आश्रित होकर चटपटी चीजोंका व्यवहार न कर उत्तम स्वास्थ्यके लिये स्वास्थ्यकर चीजोंका ही व्यवहार करना चाहिये ।

अन्नके कम प्रयोगसे स्वास्थ्यमें सुधार

आफिसमें बैठा था। फोनकी घंटी बजी। राव श्री युधिष्ठिर जी अग्रवाल ग्रांड स्मिथ वर्क्सके मालिकका फोन था। इनसे काफी वर्षोंसे परिचय है। मुझे यह भी मालूम है कि वर्षोंसे इनके परिवारमें प्राकृतिक चिकित्सा अपना चमत्कार दिखाती आ रही है। साधारण बातचीतके बाद मैंने उनसे फोन करने का कारण पूछा। उन्होंने कहा, आपसे मिलकर स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कुछ सलाह लेना है। छः महीने पहले साधारण सर्दी लगी और मैं दवाके चक्करमें पड़ गया। काफी समय और रुपया बर्बाद हुआ। पर लाभ कुछ भी नही हुआ। दशा वैसी ही रही, बल्कि और बदतर हो गयी जैसाकि इस कहावतमें कहा गया है—"मर्ज बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की"। विचार
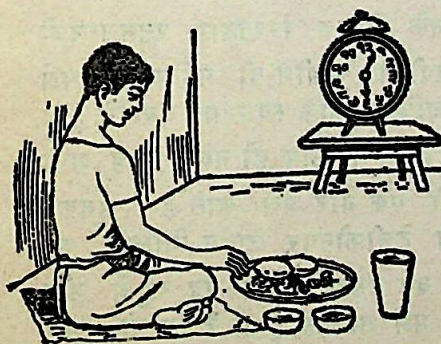
दोपहर का भोजन

किया, आप तो घरके ही हैं। मौका पड़ने पर घर वालोंको ही कष्ट दिया जाता है। मैंने कहा–आप तकलीफ न करें। मैं खुद ही आपकेयहां आ जाऊंगा। उन्होंने नहीं माना और आफिसमें मिलनेका समय तय करनेके लिए कहा।

मैंने अपनी सुविधानुसार उनसे मिलनेका समय निश्चित किया। वे आफिसमें आये और बातें की। सारी बातोंको सुननेके बाद मैंने उन्हें राय दी कि जिन लोगोंकी आर्थिक स्थिति ठीक है, उन्हें आजके इस अन्न संकटके जमानेमें अन्न-भोजन कम कर देना चाहिए। मैंने आजसे २२ वर्ष पूर्व बंगालके अकालके समय अन्नके अभावमें गरीबोंको मरते देख अन्नको एक समय ही लेनेका नियम लिया था। समय जाते देर नहीं लगती। २२ वर्ष बीत गये। कम अन्न खाकर भी मेरा स्वास्थ्य पहलेसे अच्छा ही है। उन्हें मेरी बात जंची और वह मेरे भोजन का चार्ट ले गये।

कई महीनों बाद उनके भी एक रिश्तेदार रतनलालजी सुरेका अपने लड़केकी शादीकी खुशीमें दी गई पार्टीमें मुझे मिले। मैंने उनसे राव युधिष्ठिर जीके स्वास्थ्यके बारेमें पूछा तो उन्होंने बताया, वे अब बिल्कुल ठीक हो गये। सुबह शाम दूध-फल खाते हैं, दोपहरको एक बार अन्न खाते हैं। सुनकर मुझे बड़ी खुशी हुई। उनसे टेलीफोनपर टाईम निश्चित कर मैं उनके घर पर गया। वे बड़े प्रसन्न दिखाई पड़ रहे थे और संतुष्ट थे। वह कहने लगे, मुझे आश्चर्य होता है कि जो अच्छी स्थितिके लोग हैं वे अधिक अन्न खाकर साधारण और गरीब लोगोंके लिये अन्न संकट क्यों पैदा करते हैं? साथ ही बीमार पड़कर देशके लिए कार्य करनेके घन्टोंमें कमी क्यों कर देते हैं? ऐसे लोग परिवार वालोंके लिए चिन्ता तो खड़ी ही कर देते हैं, इसके उपरान्त वे व्यर्थकी कड़वी दवाइयों और इन्जे-क्शनों द्वारा कष्ट तो उठाते ही हैं, साथ-साथ धन भी गंवाते हैं।

लेखक की अन्य कृतियाँ